प्रकाशककी सूचना।

यह जनबालबोधक प्रथमभाग श्रीयुत पूज्यवर पं० पन्नालालजी बाकलीवालने पहिलेके अपने बनाये बालमित्रादि पुस्तकोंको रद्द करके वि० सं० १९५७ तकके अनुभवसे सुधार बधार कर बनाया था, तबसे आजतक समस्त पाठशालाओंमें यही पढ़ाया जाता है। इन विगत पचीस बरसोंमें यह आठ बार छप गया परन्तु विशेष कुछ परिवर्तन नहिं किया गया। अब इस पुस्तकके रचयिता महाशयने गत पचीस बरसोंके अपने विशेष अनुभवसे पहिले पाठसे लेकर ही विशेप परिवतन किया है जिससे अब यह पुस्तक वर्णज्ञान करानेके लिये बहुत सरल अति उपयोगी बन गयी है और इस परिवर्तन व परिवर्धनसे कुछ पृष्ठ भी बढ़ गये हैं इसलिये मूल्य चार आनेकी जगह पांच आने करना पड़ा है।

—नेमिचन्द बाकलीवाल.

Printed by—Srilal Jain Kavya tirth
JAIN SIDDHANT PRAKASHAK PRESS
9 Visvakosha Lane Baghbazar, Calcutta,

श्रीवीतरागाय नमः ।

जैनवालवोधक प्रथमभाग ।

(संशोधित व परिवर्द्धित)

सोरठा ।

देव शास्त्र गुरु सार, नमू सकल मंगल करन ।
रचूं स्व परहित धार, जैनबालबोधक प्रथम ॥ १ ॥

प्रथम पाठ स्वर व्यंजन परिचय ।

अव उठ । इधर आ । ऊख चख । ईश भज । ऋण मत कर । एक ओर चल । डर मत । ऐ औ अंक पढ़ । गड़ बड़ मत कर । सच वच कह । अपयश मत गह । दश नथ । षट फल । झट पट घर चल । क्षण भर छत्र धर । ङञज्ञ अक्षर पढ़ ।

कल खल चल छल जल थल फल गन
घन जन तन धन मन वन जब तब कब अब
सब ढब सज धज भज कर मर घर भर नर तर
गड़ बड़ जड झड़ पड सड़ घट पट नट खट रट भट
झट नट जप तप टप खप सफ कफ रफ यश बस
धस फस रस कस कम यम रम गम तम हम ।

हट चल । आज कल । जल रख । फल चख ।
हट तज । सच कह । यश गह । छत पर चढ़
खल मत बन । झटपट जल भर । रथ चढ़ घर
चल । यश धन गहकर शठजन मत बन । छल बल
मत कर । परधन मत हर । इहजग यश लह ।

सकल कमल कपट रपट चलन छलन-जलन
गठन पठन सरल गरल । परम शरम भजन
तजन रमन गमन समन रकम जखम कलम
अगर मगर तगर नगर नजर शहर पहर जहर
नहर गहन वहन रहन सहन जनक तनक
सनक ऐनक ओदन और औरत औषध ।

सकल कमल रख। सरल वचन कह। चपल मत बन। कपट मत कर। चलन सरल रख। समल कर चल। घरपर अटल रह। कपट वचन मत कह। समयपर शयन कर। गरम तजकर पढ। अक्षरपर नजर रख। एक पहर पठन कर। समझकर कह। तनक औषध गरम कर।

दूसरा पाठ, आकारयोग।

का खा गा घा ङा, चा छा जा झा ञा टा ठा डा ढा णा, ता था दा धा ना, पा फा बा भा मा, या रा ला वा, शा षा सा हा, क्षा त्रा ज्ञा।

काका चाचा माता मामा नाना बावा ताऊ ताई भाई राई रामा वामा जामा आना जाना थाना दाना लाना राजा खाजा जाड़ा कादा शाला काला लाला माला छाला पाला छाता लाता खाता जाता छापा नापा। काम खाम गाम घाम आम जाम राम नाम चाल छाल जाल झाल ढाल ताल थाल।

पाल धान पान भान मान ज्ञान जान शाक हाक
नाक लाज टका रखा लगा जगा रचा ओछा
सजा ओझा कटा सटा घड़ा लड़ा गढ़ा पढ़ा
खता तथा लदा गधा चना तपा सफा चवा
सभा रमा गया जरा कला रवा आशा कपा
डसा कहा रक्षा आज्ञा सड़ा मढ़ा।

पास आ। आम खा। रामा जा। दाख ला।
बाग जाओ। शाक लाओ। नाना आओ।
खाना खाओ। दाख चख। नाक रख। बाजा
बजा। राजा सजा। चना चबा। हाक मार।
चाचा आया। मामा गया। रात गई। सभा
भई। खाजा बना। पाल तना।

माताका काम कर। चाचाका छाता रख।
एक साथ मत भाग। रात भर मत जाग।
ओझापास मत जा। मन लगा दवा करा।
सड़ा पान मत खा। पाठ पर मन लगा।

कपडा लालच भइया गइया पागल आगल,

ज़रासा तरासा भानजा फलका लड़का पकड़ा पढ़ना चढ़ना ललना चलना टलना जलना करणा भरना चाकर जाकर अपना साहस लाना गहना वहना आदत कारण लडका बालक।

पाठशाला दानशाला ज्ञानशाला अनामत हजामत दयावान दयाभाव महादान महाज्ञान महाशय महाराज मनमाना रामबाण रामायण रामलाल रामदयाल रमानाथ मानमल थानमल।

बादल आया। जल बरसाया। आग जलाओ। शाक बनाओ। लडका भागा। पागल जागा। खाओ बतासा। बडा तमासा। बाजार जाओ। खटाई लाओ। इधर सब आओ। उधर मत जाओ। रामलाल आया। रामायण लाया रामदयाल गया मानमल आया और गया

एक बार मत खा। राजा पास आज जा। लालच तजकर दान कर। ईश भज जान कर। दया भाव सदा राख। सदा मन लगाकर पढना।

ज्ञानधन एकत्र करना । चरनका गहना मत उठा। ज्ञानदाताका कहा मान । मनकर सदा बड़ा जान । कदाचार तज कर, सदाचार धारण कर । पाठक महाशयका मान रख । अपना कपडा समालकर रख । खराव मत कर । कपडा सदा साफ रख। पाठशाला जाकर पाठ याद कर ।

चौपाई १६ मात्रा ।

शाला जात सदा हरपावत ।
पाठ याद कर घर पर आवत ॥
माता तात चरनकमलन पर ।
बालक माथ नवावत मनकर ॥ १ ॥

तीसरा पाठ इकारयोग ।

कि खि गि घि चि छि जि झि टि ठि डि ढि णि ति थि दि धि नि पि फि बि भि मि यि रि लि वि शि षि सि हि क्षि त्रि ज्ञि ड़ि ढ़ि ।

दिन गिन सिर फिर

नहि माता पिता जिला शिखा चिर चित्र मित्र । फिरना गिरना हिसाब किताब शिक्षित अशिक्षित किरण चिड़ना भिडना मिरच अधिक पवित्र पाठिका सामायिक किसमत शनिवार रविवार शिक्षादाता चित्रपट अधिकता दिनभर रात्रिजागरण हितशिक्षा मितभाषण ।

जिन भज । घिन तज । किस मिस । दश दिश । मिलाप रख । मिठाई चख । विचार कर पढ । मिल कर लिख पढ । हितमित वचन कह । हितशिक्षा सदा गह । चित लगाकर चित्र लिख । माता पिताका कहा मान । कलका पाठ फिर लिख शनिवारका हिसाब फिर लिखकर याद कर । कलका पाठ याद नहि किया । कलवाला चित्र कागज पर लिख । मिरच अधिक नहि खाना । हरिदास किस दिन घरपर आया ।

चौपाई १६ मात्रा ।

निजघर विच तकरार न राखत ।
ताढिग अवशि अमित वित आवत ॥

मित्र साथ नहिं करत लड़ाई।
वालक पावत अधिक बड़ाई ॥ १ ॥

चौथा पाठ ईकारयोग।

की खी गी घी ची छी जी झी टी
ठी डी ढी णी ती थी दी धी नी
पी फी वी भी मी यी री ली वी
शी षी सी ही क्षी त्री ज्ञी ड़ी ढ़ी

दीन हीन पर दया कर। दयाहीन कभी मत बन। नीतिकी किताव पढ़। सदा सीधी चाल चल। मीठी और सीधी वात कह। मायाचारी मत कर। मायाचारी कभी छिपी नहि रहती। नीतिकी शिक्षा सदा सीख। विना छाना पानी कभी भी मत पी। गाली कभी मत दिया कर। हितकारी सीख सबकी मान। जिनवाणीकी आज्ञा बड़ी जान। माता पिताकी आज्ञा सदा मान। पाठक महाशयकी शिरपर धर। किसीपर भी रीस मत

कर। किसीकी छिपी बात कभी मत कह।
खाली कभी मत रह। अपनी समान सब जीव-
नकी रक्षा कर।

चौपाई १५ मात्रा।

मात त पिताकी आज्ञा मान।
घरकी रीति नीति सब जान॥
जीव-दया नित ही चित राख।
नीती रहित वचन मत भाख॥ १॥

पांचवा पाठ उकार योग।

कु खु गु घु चु छु जु झु टु ठु डु ढु णु
तु थु दु धु नु पु फु बु भु मु यु रु लु
वु शु षु सु हु क्षु त्रु ड़ु ढ़ु।

चुप रह। गुल मत कर। गुरु महाशयकी बात
सुन। दुराचरण तज। कुपुत्र मत बन। गुण
सीखकर सुपुत्र बन। दुखीपर करुणा कर।
कटु वचन मत कह। शुभ शिक्षा सदा गह।
कभी किसीकी बगई मत कर। गुरुजनकी

आज्ञा सदा मान और उनकी हितकारी शिक्ष मन लगाकर सुन ।

चौपाई १५ मात्रा ।

मात पिता गुरु अति हितकार ।
तिनकी आज्ञा नित शिरधार ।
कटुक वचन मुख कबहु न भाख ।
दीन दुखीपर करुणा राख ॥ १ ॥

छठा पाठ ऊकार योग ।

कू खू गू घू चू छू जू झू टू ठू डू ढू णू
तू थू दू धू नू पू फू बू भू मू यू रू लू
वू शू षू सू हू ।

झूठ भूलकर भी मत कह । धूल मत उड़ा । पाठ अधूरा मत रख । भूतका डर मत मान । भूत किसीका बुरा नहि चाहता और न कभी अपनी सूरत दिखाता । गरूर कभी मत कर । पढ़ा हुआ पाठ मत भूल । बीड़ी तमाखू कभी मत पी ।

चौपाई १५ मात्रा।

दूषण तज गुणभूषण धार।
कूरभाव मनका परिहार।
झूठ वचन कबहू मत भाख।
सांच वचनपर बढ़ती साख॥ १॥

सातवा पाठ ऋकार योग।

कृ गृ घृ तृ दृ धृ नृ पृ भृ मृ वृ शृ सृ हृ। अनृत वचन मत कह। कृपण कभी मत बन। दीन दुखी पर कृपा (दया) कर। धृति क्षमादि गुण धारण कर। हृदय सदा साफ रख। वृथा बकवाद मत कर। पृथिवीकी सदृश क्षमा रख। सदा अमृतकी सदृश मधुर और मृदु वचन कहना। अनृत और कटु वचन कदापि नहि कहना। ज्ञानकी सदृश उपकारी दूसरा नही। पृथिवीका भूषण नृपति। गृहका भूषण गृहिणी। कृषकका जीवन कृषी। सब जीवनका रक्षक ऋषि। बालकका भूषण माता पिताकी आज्ञा-

नुसार चलना और रात दिन मन लगाकर खूब पढना। पुरुषका भूषण क्षमा दया धीरता और परउपकार करना। नारी या बहूका भूषण घरकी रक्षा करना और शील पालना। मूरख अनपढ लडकनका साथ कभी नहि करना। आलू कचालू आदि कभी नहि खाना।

चौपाई १५ मात्रा।

मृदुवचनामृत मुखपर धार।
कटुक वचन कबहू न उचार।
परधन तृण समान नित जान।
परका जीवन निज सम मान॥ १॥

आठवां पाठ एकार योग।

के खे गे घे चे छे जे झे टे ठे डे ढे णे
ते थे दे धे ने पे फे बे भे मे ये रे ले
वे शे षे से हे क्षे त्रे ज्ञे।

किसीके साथ लडाई झगडे मत कर। सबसे हेल मेल रख। तेलके तले गुडके पूवे मत खा।

तेल गुड़के खानेसे खून बिगडेगा। अपने देश-का वेश ही रख। परके देशका वेश तज दे। चलते समय नीचे देखकर कीड़ी वगैरहकी जान बचाते हुये दयाके साथ चलना चाहिये। देवालय जाकर जिनदेवकी सेवा (पूजा) हमेशह किया कर। गुरु महाशयका आदेश हमेशह पालना। माथके पढनेवाले लडकनसे सदा हेल मेल रखना। अपने देशके बने हुये ही कपडे पहिरने। विदेशी कपडे छूने भी नहीं। शरीर-की रक्षाके उपाय भी हमेशह करते रहना। जिन-वाणीके उपदेश अथवा पुराण विचारके साथ सुनने चाहिये।

चौपाई १५ मात्रा।

जिनउपदेश सुने दे कान।
ताके हृदय बढइ अति ज्ञान॥
जे सुनते नहि हित उपदेश।
वे बालक दुख सहत हमेश॥ १॥

दशवां पाठ अनुस्वार, विसर्ग व चन्द्रबिंदुयोग।

क ग्र च ट न पं स

क़ नः य॑ कॅ सॅ दॅ वॅ

खराब लडकोंकी सगति हरो। पढे हुये लड़कोकी संगति करो। पढ़े हुये लड़के दु:शील नहीं होते और सब जगह मान पाते हैं। जो दांतोंको साफ नहि रखते, उनके दात थोडे ही दिनोमे गिर जाते हैं। इसकारण सवेरे ही नीमके अथवा वॅबूलके दतोनसे तथा नमक मिले कोयलेके चूरणसे रगडकर दांतोंको सदा साफ रखा करो। जो लडके अपने माता पितादि गुरु जनोंको दुःखित करते हैं, वे वडे नीच हैं, ससारमें ऐसे लड़के हमेशह दु:खी ही रहेंगे। माता पिता आदि गुरुजनोंके पुरःसर (आगे) विनयके साथ उठना वैठना चाहिये।

कवित्त।

जह चदन चपक अव कटे, सुख पै है करीरनकी

लखि छांहीं। जह हाथिको वेच विसाँहे गधे, करपूर कपास समान विकाँही॥ जहँ कोकिल हस मयूर मरे, जहँ काककि लीला लखें सुख पाँहीं। जिहँ ठौर न आदर गुणियनको, तिहँ देशहिको परणाम सदाहीं॥ १॥

ग्यारवां पाठ याद रखने लायक २१ शिक्षायें।

१ साच वचन मुखसे नित भाख।
२ पढते समम लाज मत राख॥
३ पाठ पढ़नका आलस हरो।
४ पढते इत्त उत्त नजर न करो॥ १॥
५ सब छात्रनसे राखहु मेल।
६ खोटे लड़कन सग मत खेल॥
७ छात्रनमे झगडा मत करो।
८ सबसे मित्रभाव नित धरो॥ २॥
९ परनिन्दा मुखपर मत लाव।
१० अपनि वडाईका तज भाव॥

११ छात्रनकी चुगली मत करो।
१२ कुवचन मुखपर कवहु न धरो ॥ ३ ॥
१३ मात पिता गुरु हितकर जान।
इन सम हितकारी नहि आन॥
तातें इनकी आज्ञा मान।
जातें होय दुःखकी हान ॥ ४ ॥
१४ सांझ सवेरे कसरत करो।
या मैदान वागमें फिरो॥
१५ खान पान हित हट तुम तजो।
मात पिता दे तामहि भजो ॥ ५ ॥
१६ ऐसे काम करहु मत भाय।
जातें मात पिता दुख पाय॥
१७ काम करो ऐसे तुम जोयै।
मात पिता गुरुको सुख होय ॥ ६ ॥
१८ मालिककी आज्ञा विन कोय।
चीज गहै सो चोरी होय॥

---

१ आनन्द माना। २ हे भाई। ३ देखकर।

तातें आज्ञा विन मत गहो ।
चोरीसे नित डरते रहो ॥ ७ ॥

१९ जैनी होय दया नहिं करे ।
सो पापी नरकन दुख भरे ॥
तातें जीवदया चित धार ।
यह सब धरमोमें है सार ॥ ८ ॥

२० खेल तमासोंमे मत लगो ।
इनसे तुम दूरहितें भगो ॥
पढ़लिखकर जब होउ जवॉन ।
तब निशदिन देखो नहि हांन ॥ ९ ॥

२१ बालपने जिसने नहि पढा ।
पढ़लिखकर धनमें नहिं बढा ॥
पाप तजै न बुढ़ापे माहि ।
तस तीनो पन ऐले जांहि ॥ १० ॥
तातें बालक पनमें पढ़ो ।
पढलिखकर धन सुखसे बढ़ो ॥
अरु तज पाप धरम धन गहो ।
जातें अ[illegible] सुख यश लहो ॥ ११ ।

दोहा।

ये सब मिला नित पढ़ै, जो बालक चित धार।
ते इसभव सुख यश लहै परभवमें सुखसार ॥ १ ॥

शुद्धव्यंजन वर्ण (हलवर्ण)

क् ख् ग् घ् ङ् च् छ् ज् झ् ञ् ट्
ठ् ड् ढ् ण् त् थ् द् ध् न् प् फ् ब्

इन वर्णोंको शुद्धव्यंजन अथवा कोई २ हल भी कहते हैं। ये सब वर्ण स्वरोंके मिले बिना स्पष्टतया बालकोंके नहिं आते अर्थात् इनका उच्चारण आधेसे भी कम होता है। जब ये अक्षर छोडे नहिं होते हैं और इनमें आ इ ई आदिकी मात्रा भी नहिं होती हैं तो उनमें स्पष्ट उच्चारणके लिये एक अ अवश्य मिला हुवा होता है और जब ये वर्ण व्यंजन (हल्) होते हैं, तब ये बहुधा अगले अक्षरमें मिल जाते हैं, इस मिलनेको संयोग कहते हैं और मिले हुये व्यंजनोंको संयोगी अक्षर अथवा संयुक्ताक्षर कहते हैं सो उन सबका स्वरूप क्रमसे दिखाया जाता है, पाठक महाशयोंसे प्रार्थना है कि संयुक्ताक्षरोंका स्वरूप वा संयुक्त होनेका कारण बालकोंको भले प्रकार समझा देवें।

बारहवा पाठ यकारयोग।

क्+य्+अ=क्य। ख्+य्+अ=ख्य।
क् य क्य—ऐक्य सक्य अमक्य वाक्य।

ख् य ख्य–मुख्य सख्या अख्याति विख्यात ।
ग् य ग्य–योग्य भोग्य आरोग्य योग्यता ।
च् य च्य–वाच्य अवाच्य शौच्य अच्युत ।
छ् य छ्य–छयासठ छयानवे छयालीस ।
ज् य ज्य–राज्य भोज्य भैषज्य विभाज्य ।
ट् य ट्य–नाट्य नैकट्य कापट्य आकाट्य ।
ठ् य ठ्य–पाठ्य अपाठ्य शाठ्य सुपाठ्य ।
ड् य ड्य–जाड्य जाड्यदोष ताड्यमान ।
ढ् य ढ्य–आढ्य धनाढ्य गुणाढ्य वैताढ्य ।
ण् य ण्य–पुण्य नैपुण्य अरण्य हिरण्य ।
त् य त्य–नित्य सत्य अपत्य मृत्यु हत्या ।
थ् य थ्य–मिथ्या तथ्य पथ्य कुपथ्य अकथ्य ।
द् य द्य–उद्यम विद्या विद्यमान विद्यवती ।
ध् य ध्य–साध्य असाध्य आराध्य ध्यान ।
न् य न्य–न्याय धन्य अन्य जघन्य कन्या ।
प् य प्य–प्यार प्यारा जाप्य आलाप्य ।
भ् य भ्य–सभ्य असभ्य अभ्यास अभ्यागत ।

म् य म्य–गम्य अगम्य रम्य साम्यभाव ।
य् य य्य–न्याय्यवचन शय्या साहाय्य ।
व् य व्य– काव्य सेव्य व्यय अव्यय व्याह ।
श् य श्य–अवश्य आवश्यक वेश्य सादृश्य ।
ष् य ष्य–शिष्य पौष्य पुष्य दृष्य विशेष्य ।
स् य स्य–हास्य शस्य निरालस्य आलस्य ।
ह् य ह्य–वाह्य साह्य सह्य असह्य लेह्य ।

शिक्षार्थ ।

ऐक्य विना जैनजातिका सुधार करना अशक्य है । समीचीन विद्याके विना जैन समाजकी वडी अख्याति (निंदा) हो रही है योग्य अयोग्यका विचार करके, जो योग्य हो उसे करना चाहिये। विकथा कुवचन कदापि वाच्य (कहने योग्य) नहीं । अठारह दोष रहित वीतराग (अरहत) देव ही पूज्य (पूजा करने योग्य) हैं, वीतरागदेवके सिवाय अन्य सव देव अपूज्य है। कापट्य (मायाचार) अनेक दोषो-

की खानि है। शाठ्य (दुर्जनता) जाड्य (मूर्खता) छोड गुणाढ्य बनो। जो असत्य छोड नित्य ही सत्यवचन बोलता है वही असली जैनी है। पथ्य भोजन करनेसे आरोग्यता रहती है। विद्याधन (ज्ञानधन) ही परम (बडा) धन है। विद्याध्ययनमें हर समय ध्यान रखनेसे असाध्य विद्या भी साध्य हो जाती है। न्यायसे विचारा जाय तो परोपकारीका ही जीवन धन्य है। गुणवान् बालक सबको प्यारे लगते हैं। नित्यका पढ़ा हुवा पाठ नित्य ही अभ्यास (याद) कर लिया करो। जिनमतका न्याय पढनेसे अगम्य पदार्थ भी गम्य हो जाते हैं। न्याय्य वचन कहनेमें भय किसका? विद्या पढ़नेके लिये बाल्यकालके तुल्य अन्य कोई अमूल्य समय नहीं है। जिनमतके काव्योंका माहात्म्य करनेवाले अन्य काव्य बहुत कम हैं। कुगुरुका शिष्य होना बडा पाप है। कटुवचन व हास्यवचन सह्य करनेवाले साधु (सत्पुरुष) होते हैं।

चौपाई १५ मात्रा।

कटुक वाक्य कब हू मत कहो।
सदुपदेश[1] सदा चित गहो॥
योग्यवचन सबका चित धरो।
वचन अवाच्य[2] सदा परिहरो॥ १॥
पूज्यजनोका कर सतकार।
शठ-संगत्य[3] सदा परिहार॥
शाठ्य जाड्य तज होउ गुणाढ्य[4]।
पुण्य विना नहिं होय धनाढ्य[5]॥ २॥
नित्य हि सत्य वचन मुख धार।
मिथ्या वचन कभी न उचार॥
पढ़नेमें नित ध्यान जु धरे।
सो विद्याधन सञ्चय करे॥ ३॥
धन्य वही जगमें कहलाय।
जनमन हर है प्यार बढाय॥

---

१ सच्चा उपदेश। २ गाली वगैरह अनुचित वचन। ३ दुष्टकी संगति। ४ गुणवान्। ५ धनवान।

अभ्यागतका[1] दुख सब हरो।
साम्यभाव[2] नित चितमें धरो ॥ ४ ॥
न्याय्यवचन कहते मत डरो।
बाल्यकालमें व्याह न करो ॥
वेश्यानृत्य लखत मनलाय।
सो अति दूष्य[3] हास्यपद पाय ॥ २ ॥

तेरहवा पाठ रकारयोग।

क्+र्+अ = क्र। घ्+र्+अ = घ्र।
क् र क्र—क्र—क्रोध वक्र चक्र नक्र तक्र शक्र।
ग् र ग्र—अग्र समग्र ग्रहण एकाग्र ग्राम।
घ् र घ्र—शीघ्र शीघ्रता घ्राण व्याघ्र।
ज् र ज्र—वज्र वज्रपात वज्रायुध।
त् र त्र—छत्र पत्र पात्र सुपात्र त्रपा नेत्र।
द् र द्र—निद्रा भद्रा दरिद्र दरिद्रता द्रव्य समुद्र।
ध् र ध्र—ध्रुव अध्रुव लोध्र महीध्र ध्रुवाख्यान।
प् र प्र—प्रिय अप्रिय प्रथम प्रारभ प्रताप प्रवेश।

१ अतिथि वा पाहुणा। २ रागद्वेष रहितता। ३ दोष देनेयोग्य।

भ् र भ्र–भ्राता अभ्र शुभ्र भ्रम शरदभ्र।
म् र म्र–ताम्र आम्र नम्र नम्रता नम्रीभूत।
व् र व्र–व्रत व्रज व्रण अणुव्रत महाव्रत।
श् र श्र–मिश्री श्रीमान् श्रीमती आश्रित आश्रय।
स् र स्र–स्रक् सहस्र आस्रव महस्रारि प्रस्राव।
ह् र ह्र–ह्री ह्री ह्रास ह्रद सुहृद ह्रादिनी।

— ० —

शिक्षाएं।

क्रोध मान माया लोभ ये चार कषाय वडे दुखदायक हैं, इसकारण इनके त्यागनेका क्रमसे उपाय करते रहो। भले कामोंको करनेमें शीघ्र ही अग्रगामी वनो। पात्र सुपात्र कुपात्रकी परीक्षा करके योग्य पात्रको दान करना चाहिये। दरिद्रपंडितोंको द्रव्यकी सहायता करके जिनमतकी प्रभावना बढाओ क्योंकि द्रव्यादिक शरदभ्रकी सदृश अध्रुव (अनित्य) है। प्रथम वयसहीसे सदाचारी

पडितोंकी संगति करना प्रारभ करो। माता पिता आदि गुरुजनोके निकट फलोंके भारसे नम्र हुये आम्रकी समान नम्रीभूत होकर रहना ही उचित है। हिंसा चोरी झूठ कुशील और परिग्रह इन पांच पापोंको मन वचन कायसे त्याग देना सो तो पाच महाव्रत हैं और एकदेश (यथाशक्ति) त्यागना सो श्रावकके पांच अणुव्रत हैं। धनाढ्योंके आश्रय विना पंडितोंका परिश्रम वृथा ही जाता हे। इस कारण ही जैन जाति व जैनमतका दिनोदिन ह्रास (नाश) हो रहा हे।

चौपाई १५ मात्रा।

जो नर क्रोध वक्रता तजै।
सो समग्र सुख शीघ्र हि भजै॥
जो नित दान सुपात्रन देह।
होय दरिद्ररहित तस गेह॥ १॥

कर नित पंडितजनसे प्रीत ।
तिनसम अवर न जगमें मीत[1] ॥
छात्रनको भ्राता सम जान ।
गुरुजनचरण नमता ठान[2] ॥ २ ॥
जो नर पांच अणुव्रत धरे ।
सो ही श्रावकपदवी वरे ॥
पंच महाव्रत धारे जोय ।
सो मुनिपदवी धारक होय ॥ ३ ॥

चौदहवां पाठ रेफ योग ।

नोट—व्याकरणकी रीतिसे रेफयुक्त अक्षर कर्म धर्म पूर्व इत्यादिमें प्राय द्वित्व (दो) हो जाते हैं परन्तु उनका उच्चारण कुछ भी नहिं बदलता इसलिये हमने बालकोंको सुगमता होनेके लिये प्राय द्वित्व नहिं लिखा है। पाठक महाशयोंको चाहिये कि द्वित्व होनेकी रीति बालकोंको भलेप्रकार समझा दिया करे ।

र्+क्×अ=र्क—र्क । र्+त्+अ+र्त—र्त
र् क र्क—अर्क तर्क वितर्क कर्कश शर्करा

---

१ मित्र । १ जा काइ ।

र् व र्व-गर्व गर्वित गर्वाशय दुर्विप।
र् श र्श-अर्श परामर्श दर्शन दर्शित।
र् प र्प-दर्प वर्प वर्पा वर्पण आकर्पण।
र् ह र्ह-गर्हा गर्हित अर्हत् आर्हित अर्हत।

शिक्षायें।

मूर्खजन ही कर्कश वचन बोलते हैं। धनादिक परिग्रह सहित धर्मगुरुका संसर्ग व अर्घ देकर अर्चन पूजन कदापि मत करो। क्योंकि ऐसे गुरु धनके मदमे मूर्छित (वेहोश) होकर बड़े मिथ्याती व धर्मरहित कार्य करते हैं। परके दोष देखनेवाले दुर्जन होते हैं। अजीर्णतापर भोजन करना विपके तुल्य है। आर्त ध्यान दुःखका कारण है। जैनमतमें जीव अजीव आस्रव बंध संवर निर्जरा मोक्ष पुण्य और पाप ये नव पदार्थ माने हैं। जो कुछ पढो अर्थ समझकर पढ़ो। व्यर्थ (विना अर्थके)

पढनेसे कुछभी लाभ नहि होता। जो लोग देवताके सामने बकरे भैंसे काटकर अर्पण करते हैं तथा आगमें पशु होमनेको धर्म बताते हैं वे लोग बडे निर्दयी अधर्मी और दुर्नयी है। ऐसे पडितोके बनाये हुये हिंसाका प्रचार करनेवाले अनेक ग्रंथ भी है, उनको तुम कदापि नहि पढना और न कभी सुनना। जहां तक बने, निर्वल जीवोको तन मन धनसे सहायता करके निर्भय करो। इसीको हमारे आचार्योंने अभय-दान कहा है। मनुष्यपर्याय (मनुष्यका देह) और आर्यकुल (उत्तमकुल) पाना बड़ा दुर्लभ है, इसकारण गर्हित (अनुचित) कार्य छोड़ हर्पितमन होकर नित्यप्रति अर्हंत भगवानका (वीतराग प्रतिमाके) दर्शन पूजन किया करो जिससे हृदय पवित्र होकर पूर्वभवके (पहले जनमके) किये हुये पाप कर्मोंका नाश और शुभ कर्मोका (पुण्यका) आस्रव (आगमन) हो।

चौपाई १६ मात्रा।

कर्कश वचन कभी न उचारहु।
शठससर्ग सदा परिहारहु॥
अर्घ लेय जिनअर्चा[1] करहू।
धनगृहादिमें मूर्छा[2] हरहू॥ १॥
दुर्जनकी संगति परिहरना।
देव धर्म गुरु निर्णय करना॥
जगत अनादिनिधन[3] सबही है।
कर्त्ता हर्त्ता कोउ नहीं है॥ २॥
धर्म सु अर्थ मोक्ष अरु कामा।
इनमें मोक्ष सकल-सुख-धामा॥
निर्दोषिनकी संगति धारहु।
निर्धन जनपर दया न टारहु॥ ३॥
दुर्नय[4] त्याग नीतिमग चालहु।
तन धन-दर्प[5] हृदयमें टालहु॥

१ जिन पूजा। २ मोह। ३ जिसकी न तो आदि हो और न कभी अन्त हो। ४ दुर्नीति। ५ तन धन गर्व।

जो दुर्बलकी करत सहाई।
सो बालक निर्भय पद पाई ॥ ४ ॥
धर्मकार्यपर चित नित धारो।
दुर्लभ नरभवको कर सारो ॥
हर्ष-सहित जिन दर्शन करहू।
गर्हितकर्म सदा परिहरहू ॥ ५ ॥

गोपाल।

गोपाल बडा सुशील[४] बालक है, इस कारण वह अपने माता पिताको बडा प्यारा लगता है। वे जो कुछ उपदेश देते हैं, गोपाल उसको हमेशा याद रखता है। गोपालके माता पिता जिस समय जो काम्य करनेको कहते हैं, वह तुरत ही उस काम्यको करता है और वे जिस काम्यके करनेका निषेध करते हैं, वह उस काम्यको कदापि नहिं करता।

२। गोपाल मन लगाकर विद्या पढता है। विद्या पढनेमें कदापि अरुचि व आलस्य नहिं करता। क्योंकि वह हमेशा अपने मनमें विचारता रहता है कि "यदि बालकपनमें विद्याभ्यास नहि करूंगा, तो उमर भर दुःख पाऊंगा।"

३। गोपाल अपनी छोटी बहन और भाई पर अतिशय

---

१ पाठस्थान। २ अच्छा उत्तम। ३ निंदित कार्य। ४ अच्छे स्वभावका।

प्यार करता है। उनके साथ कदापि लड़ाई झगडा नहिं करता और न कभी उनपर हाथ उठाता है। खानेको कोई चीज मिलती तो यह उनको न देकर अकेला कदापि नहिं खाता।

४। गोपाल कदापि झूठ नहिं बोलता। वह जानता है कि झूठ बोलनेवालेको कोई भी भला नहिं समझता और न कोई उसकी बातोंका पतियारा करता है सब ही लोग उससे घृणा (घिन) करते हैं।

५। गोपाल कभी भी कोई अनुचित कार्य्य नहिं करता यदि भूलचूकसे हो भी जाय तो माता पितादि गुरुजनोंके धम काने पर नाराज नहिं होता। क्योंकि वह अपने मनमें यह विचारता है कि मैंने अनुचित कार्य किया था, इसी कारण मुझे माता पितादि धमकाते हैं। अब मैं ऐसा कार्य कदापि नहिं करूंगा।

६। गोपाल कदापि किसीसे कटुवचन नहिं कहता। दुर्वचन व बुरी बात तो जुबानपर भी [illegible] और न वह किसीके साथ हमेश (

८। गोपाल बड़ा परिश्रमी है वह अपना कुछ भी समय आलस्यमें वृथा नहिं विताता। जिस समयका जो कार्य्य होता है उस समय वह उसीको मन लगाके किया करता है। वह अपने पढ़ने लिखनेके समय कदापि नहिं खेलता।

९। गोपाल दुःशील (खराब) लड़कोंके साथ कदापि नहिं फिरता और न उनके साथ कभी खेलता है। वह भले प्रकार जानता है कि दुःशील लड़कोंके साथ खेलने तथा रहनेसे मैं भी दुःशील (खराब) हो जाऊंगा।

१०। गोपाल जिस समय पाठशालामें रहता है तो गुरु महाशय जिस समय जो करनेको कहते हैं, गोपाल बड़ हर्षके साथ वही कार्य्य करता है गुरु महाशयकी आज्ञाके खिलाफ कोई काय नहिं करता। इसी कारण गुरुमहाशय गोपालपर अतिशय प्यार तथा कृपा रखते हैं।

हे बालको! जो तुम सुख चाहते हो तथा दुनियामें अपनी कीर्ति (यश) चाहते हो तो तुम भी अपनेको गोपालके समान सुशील बनाओ।

पद्रहवा पाठ लकारयोग।

क्+ल्+अ = क्ल। ग्+ल्+अ = ग्ल।

क् ल क्ल—क्लेश क्लेशित सक्लेश क्लास।

ग् ल ग्ल—ग्लानि ग्लानिसहित ग्लास।

प् ल प्ल—विप्लव प्लावन प्लुत प्लीहा।

म् ल म्ल—म्लान म्लानमुख अम्ल अम्लान।
ल् ल ल्ल—उल्लास दिल्ली बिल्ली वल्लभ पल्लव।
श् ल श्ल—अश्लील श्लेष श्लोक श्लाघा।
ह् ल ह्ल—आह्लाद प्रह्लाद आह्लादित।

शिक्षाये।

किसी जीवको क्लेश देकर क्लेशित करना समझदारोंका काम नहि है। रोगीको देखकर ग्लानि करना अनुचित है। राज्यकर्मचारियोंके अत्याचारोंसे ही राज्यमे विप्लव (उपद्रव) होते हैं। प्रियपुत्रका म्लान मुख देखनेमे माताको बड़ा क्लेश होता है। बहुतसे मूर्ख होलीके दिनोंमें अश्लील (फाटे) वचन बोलकर बड़े आह्लादित होते हैं परंतु तुम कदापि अपने मुहमे गाली वगेरह अश्लील वचन नहि बोलना।

चौपाई १५ मात्रा।

क्लेशित जनपर करुणा करो।
ग्लानी तज उनका दुख हरो॥

विप्लव–कारण राज–अनीति।
अम्ल अधिकसे मत कर प्रीति॥ १॥
कर उल्लास गहै नित ज्ञान।
सो बालक हो विद्यावान॥
जो अश्लील वचनमुख धरै।
सो निज लाज सर्वथा हरै॥ २॥

सोहन।

मोहन नामका लडका एक दिन तीन लडकोंके साथ किसी बागमें गया था। सोहनकी उम्र सात वर्षकी थी। उस बागमें गुलाबके पेडपर एक बहुत ही सुन्दर फूल लगा था। उसको देख कर एक लडकेने कहा कि–चलो यह अपने फूल तोड लें। यह सुनकर सोहनने कहा कि "भाई! उस दिन पिताजीने कहा था कि बिना दिये परका द्रव्य लेना सो चोरी है। चोरी करना बडा पाप है। तुम जो यह फल लेवोगे, तो यह चोरी करना हुआ। सो भाई इस प्रकार पराई चीजपर लोभ करोगे तो तुमको कोई भी प्यार नहिं करेगा।'

जिसका बाग था, वह भी वहांपर मौजूद था परन्तु उन लडकोंने उसको नहिं देखा था। उस छोटेसे लडकेके मुखसे यह बात सुनकर मालिकने सोहनका झट

और प्यार करके वह फूल उसको देकर कहा कि 'तूने अपने पिताके उपदेशानुसार काम किया, इस कारण यह फूल तुझे इनाममें देता हूं।

पद्रहवा पाठ वकारयोग।

क्+व्+अ = क्व। श्+व्+अ = श्व।

क् व क्व–पक्व अपक्व सुपक्व परिपक्व।
ग् व ग्व–ग्वालियर दिग्विजय दिग्विभाग।
ज् व ज्व–ज्वर ज्वाला ज्वालामुखीपहाड।
ड् व ड्व–खड्वा खड्वाग खड्वागधारी।
त् व त्व–मृदुत्व त्वरित मिथ्यात्व जडत्व।
थ् व थ्व–पृथ्वी पृथ्वीराज पृथ्वीनाथ।
द् व द्व–द्वार द्वारका द्वादश द्वादशी।
ध् व ध्व–ध्वम माध्वी अध्व ध्वनि।
न् व न्व–अन्वय अन्वेषण त्वरान्वित।
ल् व ल्व–बिल्व बिल्वफल बिल्वग्राम पल्वल।
श् व श्व–अश्व विश्व विश्वनाथ विश्वास।
स् व स्व–स्वाद विस्वाद ह्रस्व स्वजन स्वभाव।
ह व ह्व–विह्वल आह्वानन जिह्वा गह्वर।

लिखाव।

श्रावकको (जैनीको) सबसे पहिले श्रावकाचारमें परिपक्व होना चाहिये। प्राचीन समयमें अनेक दिग्विजयी जैनी विद्वान् हो गये हैं। ज्वालामुखी पहाड़ोंमेंसे निरंतर आगकी ज्वालायें निकला करती हैं। बरसातके दिनोंमे खट्वापर ही सोना चाहिये। कुदेवको देव, कुगुरुको गुरु, कुधर्मको धर्म मानना सो मिथ्यात्व है। पृथ्वी नारंगीके समान गोल नहीं है, किंतु समुद्रसे वेढ़ी हुई थालीकी समान गोल है। गणधरोंने जिनवाणीके आचारांग सूत्रकृतांगादि द्वादश अंग (खंड) बनाये। केवली भगवानकी वाणी मेघध्वनिके समान विना अक्षरोंकी खिरा करती है। खल पुरुष परके दोषोंका ही अन्वेषण किया करते हैं। अपक्व बिल्वफल (बेल) संग्रहणीके रोगीको बहुत फायदा करता है। विपत्के समयमें [illegible] धैर्य रखना चाहिये।

चौपाई १६ मात्रा।

भोजन पके भये जो खावे।
ज्वरबाधा नहि ताहि सतावै॥
जो मृदुत्वगुण चितमें धारहि।
सो पृथ्वीमें यश विसतारहि॥ १॥

विद्या पढ विद्वान कहावे।
सो दुख धरों सदा सुख पावे॥
सत्यान्वित बालक जो होई।
तस विश्वास करे सब कोई॥ २॥

जो स्वर्गनकेसु सुख चाहो।
तो जिनधर्म सदा चित गाहो॥
विपति समय जो ह्वै अति धीरा।
सो नर ही हर हैं भवपीरा॥ ३॥

मोहनलाल।

मोहनलाल नामका एक लडका था। उसकी उमर दश वर्षकी थी। वह खेलकूदमें इतना लवलीन था कि दिन भर गलियोंमें खेलता फिरता था। पढ़ने लिखनेका तो नाम भी

१ हजम। २ कोमलभाव। ३ नाश करके। ४ सत्यवादी। ५ मनन करते रहो।

नहिं सुहाता था। इस कारण गुरु महाशय उसको प्रतिदिन मारते थे। जिससे उसने पाठशालामें जाना भी छोड़ दिया। इसीकारण मोहनलाल कुछ भी नहिं पढ़ सका।

मोहनलालने एक दिन देखा कि गुलाबचन्द नामका लड़का पाठशालामें पढ़नेके लिये जा रहा है। वह उससे कहने लगा कि भाई गुलाबचन्द ! आवो, अपन दोनों तास खेलें। गुलाबचन्द-ने कहा कि—मैं तो पढ़नेको जाता हूं। इस समय कदापि नहिं खेल सकता। क्योंकि पढ़नेके समय खेलनेसे विद्याभ्यास नहिं कर सकूंगा। पिताजीने पढ़नेके समय पढ़ने और खेलनेके समय खेलनेको कहा है इस कारण मैं जिस समयका जो कार्य है, उस समय वही कार्य करता हूं। यहां तो कारण है कि—मेरे पिताजी मुझे बहुत प्यार करते हैं। मैं जिस समय जो चीज उनसे मांगता हूं, तुरंत दे देते हैं। यदि मैं इस समय पढ़नेको न जाकर तेरे साथ खेलने लग जाऊं तो पिताजी फिर मुझ पर इतना प्यार कदापि नहिं करेंगे। उनने कहा है कि—"बालकपनमें विद्याभ्यास न करके दिन भर खेलनेसे उमर भर दुःख भोगना पड़ेगा।" इस कारण भाई मुझे माफ करो। ऐसा कहकर गुलाबचन्द चला गया।

फिर थोड़ीसी दूर जाकर मोहनलालने देखा कि—लालचन्द नामका एक लड़का चला जाता है। उसको देख मोहनलालने कहा कि—भाई लालचन्द ! तुम कहां जाते हो ? लालचन्दने कहा कि मेरे पिताजीने बाजारसे एक पैसेके पान लानेको भेजा

है तब मोहनलालने कहा कि भाई ! पाठ थोड़ी देर पीछे ले जाना, आओ अपन दो चार दाव तासके खेल लेवें । देखो ! मेरे पास कैसे सुन्दर तास हैं। मालचन्दने कहा कि नहिं भाई ! मैं तो इस समय नहिं खेल सकता । पिताजीने जिस कामको भेजा है, पहिले वही काम करूं गा। क्योंकि पिताजीने कहा है कि— "कामके समय काम न करके खेलनेसे हमेशह दुःख भोगने पड़ेंगे" इस कारण मैं अपने कामम कदापि हर्ज नहीं डालता। जिस समयका जो कार्य है उस समय उस कार्यमें कदापि हानि नहिं करूं गा। इस प्रकार जवाब सुनकर मोहनलाल वहांसे चल दिया।

आगे जाने पर पाठशालाको जाते हुये हीरालाल वगैरह कई लड़के मिले। उनसे भी मोहनलालने खेलनेके लिये कहा। परन्तु उन सबने उपरि लिखे अनुसार ही जवाब दिया उन सबका जवाब सुनकर मोहनलालने अपने मनमें विचार किया कि—देखो सब ही जने अपने २ कामके समय काम करते हैं। कोई भी लड़का अपना काम छोड़ कर खेलता नहिं फिरता, अकेला मैं ही एक दिनभर खेलता फिरता हूं। सब ही लड़कों ने कहा कि—कामके समय काम न करके खेलनेसे हमेशह दुःख भोगने पड़ेंगे इसीकारण वे दिनभर नहिं खेलते। मैं भी यदि पढ़ने के समय न पढ़ कर दिन भर खेलता फिरूं गा तो अवश्य ही उमर भर दुःख भोगूं गा। पिताजीको मेरे खेलने की बात मालूम होगी तो मुझे प्यार नहीं करके बहुत ही मारेंगे। सो मैं पढ़ने लिखनेमें कदापि हानि नहिं करूं गा।

इसप्रकार विचार करके मोहनलालने उसी दिनसे पढने लिखनेमें मन लगाया और उस दिनसे फिर वह कभी भी दिनभर नहि खेला। जिससे मोहनलालने थोडे ही दिनोंमे बहुत कुछ पढ लिया। जिसको देखकर सब लडकोंने प्रशंसा की और माता पिता गुरुजी भी प्यार करने लगे।

हे बालको ! तुम भी पढने लिखने में पूर्ण परिश्रम करो। पढनेके समयमें कदापि मत खेलो।

सतरहवा पाठ णकारनकार योग।

ष्+ण+अ = ष्ण । क्+न्+अ = क्न ।

ण् ण ण्ण—विषण्ण षण्णवति विषण्णवदन ।

ष् ण ष्ण—विष्णु जिष्णु सहिष्णु उष्ण ।

ह् ण ह्ण—पराह्ण अपराह्ण पूर्वाह्ण ।

क् न क्न—शक्नु अशक्नु ।

ग् न ग्न—मग्न भग्न रुग्न अग्नि भग्न लग्न ।

घ् न घ्न—विघ्न कृतघ्न शत्रुघ्न विपघ्न ।

त् न त्न—रत्न यत्न प्रयत्न रत्नाकर पत्नी ।

न् न न्न—अन्न भिन्न खिन्न प्रसन्न किन्नर ।

प् न प्न—स्वप्न स्वप्नदशा प्राप्नोति ।

म् न म्न–निम्न निम्नगा आम्नाय प्रद्युम्न।
श् न श्न प्रश्न प्रश्नी प्रश्नकर्ता।
स् न स्न स्नेह सस्नेह स्नान अस्नात।
ह् न ह्न–चिह्न मध्याह्न वह्नि आह्निक।

शिक्षाये।

विपत्में विपण्ण होना मूर्खोंका काम है। अपराह्नके समय धूपकी बड़ी उष्णता होती है, इसकारण अपराह्नके समय धूपमें कदापि नहिं फिरना चाहिये। शक्नु बालक (प्रियवादी बालक) सबका मन रंजन करता है। चितामें मग्न रहनेमें शरीर कृश हो जाता है। जो अपने उपकारीके किये हुए उपकारको नहि मानता, उसको कृतघ्नी कहते हैं। कृतघ्नता करना बडा पाप है। सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्रको रत्नत्रय कहते हैं। घर पर आये हुये दीन दुःखियोंको अन्नदान देनेसे बडा पुण्य होता है। परका अकल्याण (अम-

गल) स्वप्नमे भी मत चाहो। जो लोग परका अकल्याण चाहते है, वे निम्न श्रेणीके (नीचे) मनुष्य है। अनुचित प्रश्न करना मूर्खोंका व नीचोंका काम हे। नित्यस्नान करनेसे शरीर नीरोग रहता है। जीवोंकी रक्षा करना पानी छानकर पीना और रात्रिको भोजन नहि करना ये तीन जैनीके (श्रावकके) वाह्य-चिह्न है।

चोपाई १६ मात्रा।

गुण सहिष्णुताका सुखकारी।
दुखके दिन नहि लागत भारी॥
फिर फिर यत्न करै जो कोई।
भग्नमनोरथ कभी न होई॥ १॥
स्वजन स्वप्नमें भी दुखदाई।
वचन असत्य न वोलहि भाई॥
यान लगाय प्रश्न सुन लीजे।
सोच समझ फिर जवाव दीजे॥ २॥
सेवा स्नेहमयी माताकी।
और भ्राताकी॥

मित्र देख हरषत अति ही है।
चिह्न प्रीतिका प्रगट यही है॥ ३॥

कौवा और मोरके पंख।

एक जगह थाडेसे मोरके पंख (पांख) पड़े थे। उनको देखकर एक कौवेने विचार किया कि मैं इन पांखोंको अपने पांखोंमें (परोंमें) लगा लूं, तो मैं भी मोरोंके समान सुन्दर हो जाऊंगा, इस प्रकार विचार कर कौवेने उन पांखोंको अपनी पांखोंमें लगा लिया और कौवोंके पास जाकर कहने लगा कि—"तुमलोग बड़े नीच और कुरूप हो। मैं तुम्हारे साथमें रहना पसंद नहिं करता ऐसा कह कर अपने जातिभाइयोंको (कौवोंको) गालियां देता हुवा मोरोंमें जाकर मिल गया। उसने यह समझा था कि मुझे कोई पहिचानेगा नहीं परंतु मोरोंने उसे देखते ही पहचान लिया और उनकी पांखें नोच नोच कर सब पांखें निकाल लीं तथा चोंचोंसे मार मार कर खूब खबर ली जिससे वह कौवा व्याकुल होकर भाग गया। लौट कर अपने जातिभाइयोंमें मिलनेको गया तो उन्होंने बहुतसी हंसी दिल्लगी करके कहा कि—आप तो थोड़ेसे मोरके पंख लगा कर ऐसे घमंडमें आ गये—कि हमसे घृणा करके मोरोंमें मिलनेको चले दिए। परन्तु जब मोरोंने मार भगाया तो अब हमको मुंह दिखाने आये हो? धिक्कार है

तुमारी अक्ल पर, जो अपनी जातिका सनातन भेप (चाल चलन) बदल कर दूसरोंका भेप बनाया। जावो; चुल्लूभर पानीमें डूब मरो, हमको अपना मुह मत दिखावो। इस प्रकार धिक्कार देकर कौवोंने भी उस मार पीटकर जातिमेंसे निकाल दिया।

इस कहानीसे बालकोंको यह शिक्षा लेनी चाहिये कि जो कोई आदमी बिना समझे बूझे अपनी जाति तथा देशके अनुसार खाना पहरना व चाल चलन न रखकर विदेशियोंकी देखा देखी अपना खाना पहरना बदल देता है, उसको कौवेकी तरह दोना तरफसे शरमिंदा होना पडता है। इस कारण तुमको अपने देश व अपनी जातिके अनुसार ही खान पान व चाल चलन रखना चाहिये। अगरेजो व अगरेजी पढे हुये नयी रोशनीके बाबुओंके समान कोट बूट पतलून आदि धारणकर रीछोंकीसी काली पोशाक हरगिज नहि रखना चाहिये। तथा वैधकके मतानुसार काला कपडा शरीरको भी नुकसान पहु चनेवाला होता है।

अठारहवा पाठ मकारयोग।

क्+म्+अ = क्म। ग्+म+ = ग्म।

क् म क्म—रुक्मिणी रुक्म।

ग् म ग्म—वाग्मी वाग्मीजन युग्म

ङ् म ङ्म–पराङ्मुख वाङ्मय दिङ्मुख।
ण् म ण्म–मृण्मय षण्मास षण्मात्र षण्मुख।
त् म त्म–आत्मा बहिरात्मा अंतरात्मा परमात्मा
द् म द्म–पद्म पद्माकर पद्मिनी छद्म छद्मवेशी।
ध् म ध्म–आध्मान आध्मात आध्मातिक।
न् म न्म–जन्म सन्मति तन्मय चिन्मय।
म् म म्म–सम्मति सम्मत सम्मान असम्मत।
ल् म ल्म–गुल्म शाल्मली जुल्म कल्मष।
श् म श्म–रश्मि कश्मीर श्मशान पश्मीना।
ष् म ष्म–ऊष्म ग्रीष्म आयुष्मान् युष्मद्।
स् म स्म–स्मर स्मरण भस्म स्मृति विस्मय।
ह् म ह्म–ब्रह्मा ब्राह्मण ब्रह्मज्ञानी जिह्म।

शिक्षार्थ।

कृष्णजी रुक्मिणीको हरणकर लाए थे। वाग्मीजनोंके वाक्यविन्यासद्वारा हृदय प्रफुल्लित हो जाता है। धर्मके कार्योंसे पराङ्मुख होना उचित नहीं। खलपुरुषोंकी मित्रता मृण्मयघट-

के समान शीघ्र ही टूट जाती है। जिनमतमें आत्माके वहिरात्मा अतरात्मा और परमात्मा ये तीन भेद किए हैं। छद्मवेशधारी त्यागियोंका विश्वास करना ठीक नहीं। विद्याहीन मनुष्यका जन्म ही वृथा है। विद्वानोंका सब जगह सम्मान होता है। रामायणके कर्ता वाल्मीकि पहिले बड़े डांकू (लुटेरे) थे। केशर और पश्मीनी दुशाले काश्मीर देशमे होते हैं। शीत कालमें कूएका जल और बडकी छांह ऊष्म (गर्म) रहती है। जो पढो उसे स्मरण रखना चाहिए। जो ब्रह्मको (आत्माको) जाने वही ब्राह्मण है।

चौपाई १५ मात्रा

गुरुका हुक्म कभी मत टालहु।
धर्मपराङ्मुख[1] होय न चालहु॥
वाग्मी-जैन[2] नहि करत अनीती।

१ धर्म विरुद्ध। २ वक्ता—पंडितजन।

मृण्मयभाजन सम खलप्रीती ॥ १ ॥
परमात्मापदका धर ध्याना ।
हृदय-पद्म तब है अम्लाना ॥
आत्मध्यानमें तन्मय होई ।
कर निर्मल चित कारिख धोई ॥ २ ॥
जो निज कल्मष नित्य खपावे ।
पुण्य-वेश्म होकर सुख पावे ॥
परधन लखि विसमय मत करहू ।
ब्रह्मज्ञान लखि निज दुख हरहू ॥ ३ ॥

गधा और बैल।

एक गधेकी पीठ पर खाडकी (शक्कर) बोरी लदी हुई थी। वह मार्गमें चलते हुये किसी कांटेवाले घासको खाने लगा उसे कांटे खाते देखकर एक बैलने कहा कि भाई ! तेरी पीठपर बहुतसी मीठी खांड लदी हुई है तो भी तू ये कांटे क्यों खाता है ?

यह सुन कर गधेने गंभीरताके साथ जवाब दिया कि हा

१ मट्टीका बर्तन। २ कमल। ३ निर्मल। ४ लवलीन। ५ पाप ६ धर्मात्मा।

भाई! मेरी पीठपर वसुतसो खाड लदो है तथा वह मीठी भी है। परतु यह मेरे लिये नहीं है। जिसके लिये है, उसीको स्वाद आवेगा, मुझे इससे क्या प्रयोजन? मुझे तो यह घास ही खानेको मिला है। इसके खानेमें जो मुझे आनन्द है, उसे मैं इस खाडसे सौगुना मीठा समझता हू। इस जवाबके सुननेसे वन चुप होगय।।

हे बालको! इस कहानीसे यह शिक्षा लेनी चाहिये कि सुख तथा आनन्द जो सन्तोषमें है, वह किसीमें भी नहीं है इस कारण तुमको चाहिये-कि तुमारे माता-पिता जैसा तुम को खाने तथा पहरनेको दे उसीमें सन्तोष कर प्रसन्नतासे रहो। दूसरेकी देखादेखी अधिककी आशा कदापि मत करो।

उन्नीसवा पाठ मिश्रसयोग पहिला भाग।

क्+त्+अ = क्त = क्त। क्+ष्+अ = क्ष।

क् क क धिक्कार हिक्का चिक्कन सचिक्कन।

क् ख क्ख दुक्ख चक्खु अचक्खु रक्खा।

क् त क्त वक्ता भक्त भक्ति शक्ति मुक्ति।

क् ष क्ष वृक्ष अक्ष क्षेत्र लक्षण भक्षण रक्षण

ग् द ग्द वाग्दान वाग्देवी सम्यग्दर्शन।

ग् ध ग्ध मुग्ध मुग्धा दग्ध विदग्ध

ङ् क ङ्क पङ्क गङ्का शङ्कित अङ्कित।
ङ् ख ङ्ख शङ्ख शृङ्खला शङ्खध्वनि पङ्खा।
ङ् ग ङ्ग वङ्ग अङ्ग भङ्ग सङ्ग सङ्गति गङ्गा।
ङ् घ ङ्घ जङ्घा लङ्घन लङ्घित उल्लङ्घन।
च् च च्च उच्च उच्चपद सच्चा बच्चा कच्चा।
च् छ च्छ अच्छा आच्छादन स्वच्छ तुच्छ।
च् ञ च्ञ याच्ञा।
ज् ज ज्ज लज्जा लज्जित सज्जित मज्जनता।
ज् ञ ज्ञ अज्ञ सर्वज्ञ ज्ञान विज्ञान अज्ञान।
ञ् च ञ्च अञ्चल चञ्चल वञ्चित संचित पञ्च।
ञ छ ञ्छ वाञ्छा वांछित लांछना।
ञ् ज ञ्ज व्यञ्जन अञ्जन खञ्जन रञ्जन
ञ् झ ञ्झ झञ्झा झञ्झित झञ्झावात।
ट् ट ट्ट पट्टी टट्टी खट्टा खट्टी अट्टहास।
ट् ठ ट्ठ चिट्ठी लट्ठा गट्ठा इकट्ठा पट्ठा।

शिक्षायें।

जो लड़का विद्या पढनेमें आलस्य करता है,

वह सब जगह धिकार पाता है। माता पितादि गुरुजनोंकी सेवा भक्ति तनमनसे करना चाहिये। मांस मच्छी भक्षण करनेवाले म्लेच्छ सरीखे होते हैं। वाग्दान (भरोसा) देकर निराश करना नीचोंका काम है। गोदुग्धकी बराबर शरीरको हितकारी और कोई पदार्थ नहीं है। हिंसा चोरी झूठ कुशील और परिग्रहके त्यागीको राज्यदंडकी शंका (भय) नहीं है। दासत्वभृंखलासे जेलखानेकी वेडी अच्छी है। सत्संगतिके गुणोंकी संख्या कोई नहीं कर सकता। गुरुजनोंकी आज्ञा उल्लंघन करनेवाले विपत् आनेपर पछताते हैं। सच्चरित्र पुत्र ही कुलका मंडन है। पहरनेके कपडे व रहनेका घर सदैव स्वच्छ (साफ) रखना चाहिये। याच्ञा करनेसे मर जाना अच्छा है। औरतोंका प्रधान गहना शील और लज्जा है। ज्ञानदान

१ भिक्षा।

औषधदान अभयदान व आहारदान इन चारों दानोंमेंसे ज्ञानदान ही मुख्य दान है। लोभी गुरु केवलमात्र धर्म और धनके वंचक (ठग) होते हैं। परद्रव्य ग्रहण करनेकी वांछा स्वप्नमें भी नहिं करना चाहिये। सुशील वालक सबका मनोरंजन करता है। अन्धेरेमें घरसे वाहर होना उचित नहीं। अट्टहास करना बहुत बुरा कुलक्षण है। चिट्ठी लिखकर एकवार जरूर पढ लिया करो।

चौपाई १५ मात्रा।

पापीजन पावें धिकार।
सदुवक्ताका है सत्कार॥
शिक्षा विना गमावहिं काल।
वे निःशंक मुग्ध हैं बाल॥ १॥
जो दासत्व शृंखला धरें।
सो निःसर्ग महा दुख भरें॥

१ विद्यालाभ। २ घर्वा सहित हसनें। ३ परोपकारी सदु विद्वान्। ४ मूर्ख। ५ नोकरीरूपी बेडी। ६ दरिद्र।

गुरु-आज्ञा-लघनसे डरो।
उच्चाशयको तुच्छ न करो॥ २॥
सज्जन सुगुरु कहावे सोय।
वाञ्छा रञ्च न जाके होय॥
गृह शरीर वसनादिक अच्छ।
राखहु नित सादे अरु स्वच्छ॥ २॥

हीरालाल और मोतीलाल।

भाई मोती! देखो एक दुःखी बालक जाता है। उसके पहरनेको जूता टोपी कुडता दुपट्टा कुछ भी नहीं है। एक फटीसी धोती पहरे हुये है। भूखसे व्याकुल होकर घर घर भीख मागता फिरता है। हम लोग यदि इसके समान होते तो कितना दुख पाते? हम लोग मनचाहे कपडे पहरते हैं, भूख लगते ही खानेको मिल जाता है, शीतकालमें दुलाई शाल रूमाल गुलूबन्द वगेरहसे शीतको बचाते हैं। इस विचारेके शरीरपर तो एक भी कपडा नहीं है। देखो भाई! इसको पेटभर खानेको न मिलनेके कारण यह कितना दुबला और रोगीसा मालूम पडता है। क्यों मोती! यह भला क्यों रोता है?

मोतीलालने कहा कि—भाई हीरा! यह लडका बडा गरीब

१ बडे अभिप्रायको।

तथा सीधा है। इसके माता पितादि सब मरगये हैं। अब यह किसके पास जाय जो इसे खानेको दे? इसके शरीर पर कपडा भी कहासे आवे? आप लोगोंके पास जाता है तो वे घृणा करके फटकार देते हैं। इत्यादि विचार करके यह रोता है। देखो! दोनों नेत्रोंसे इतने आंसू बहरहे हैं कि उनसे इसका पेट तक भीज गया है। मनके दुःखसे अतिशय दुःखित हो यह सड़कके एक किनारेसे जारहा है।

हीरालालने कहा—भाई मोती! इसको खड़ा रक्खा, मेरे पास एक पुरानासा कुड़ता व टोपी है, सो मैं अभी अपनी मासे मांग लाता हूं और इस दिये देता हूं। तुम्हारे पास प्रथमभागकी दो किताबें हैं उनमेंसे एक इसको दे दो तथा प्रतिदिन जब हमको पाठशालासे पानी पीनेको छुट्टी मिलती है, उस समय इसको आनेक लिय कह दो उस समय हम थोडा २ इसे खानेको भी देंगे तथा यत्नसे पढाया भी करेंगे। आखिर मोतीलालने वैसाही किया।

हे लडको! तुम भी हीरालाल मोतीलालकी तरह दुःखीपर दया करके तन मन धनसे उसकी सहायता किया करो। मनुष्यका मुख्य धर्म यही है।

उन्नीसवां पाठ मिश्रसयोग दूसरा भाग

द्+ग्=द्ग। द्+घ+अ=द्घ

प्+त्+अ=प्त।

ङ् ग ङ्ग-खङ्ग खङ्गाधार खङ्गघात पङ्गु।
ड् ड ड्ड अड्डा उड्डीयमान उड्डयन।
ण् ट ण्ट कण्टक कण्टाल घण्टा चंटक।
ण् ठ ण्ठ कण्ठ शुण्ठि शुण्ठिपाक लुंठित
ण् ड ण्ड प्रचण्ड घमण्ड पण्डित मंडित।
त् क त्क सत्कार सत्कुल उत्कंठा उत्कंठित।
त् त त्त पत्ता कुत्ता सत्ता उत्तम उत्तर।
त् त त्थ उत्थान उत्थित उत्थापन कत्था।
त् प त्प उत्पात सत्पात्र सत्पुत्र सत्पुरुष।
त् स त्स कुत्सित सत्सगति चिकित्सा।
द् ग द्ग गद्गद्वचन उद्गार पुद्गल सद्गति।
द् घ द्घ उद्घाटन उद्घाटित उद्घन।
द् द द्द उद्दित उद्देश उद्देश्य उद्दीपन।
द् ध द्ध उद्धत उद्धार श्रद्धान प्रसिद्ध।
द् भ द्भ अद्भुत उद्भव सद्भाव सद्भावित।
न् त न्त अन्त दन्त शान्त सतोप सतान।
न् थ न्थ कन्थ पन्थ सुपन्थ कुपंथ कथा।

न् द न्द कन्द मन्द नदन चदन वदन।
न् ध न्ध अन्धा कन्धा वन्धु सिंधु संधत।
प् त प्त आप्त प्राप्त प्राप्ति गुप्त समाप्त।
प् प प्प कुप्पा अप्पा कप्प कप्पामर।
प् स प्स इप्सा ईप्सित निर्जुगुप्सा।
ब् ज ब्ज सब्ज अब्ज कुब्ज सब्जी अब्जयोनि।

शिक्षायें।

कमसे कम दो घण्टे तो उत्कण्ठापूर्वक सवको ही कुछ न कुछ स्वाध्याय करते रहना चाहिए। मूर्खजन ही विद्या और धनका घमण्ड करते हैं। घर आए शत्रुका भी आदरसत्कार करना चाहिए। उत्तम लड़के वे ही हैं, जो विद्या पढना शुरू करके अधवीचमें नहीं छोड़ते। हितकारी आज्ञा बच्चेकी भी उत्थापन करना उचित नहीं। दान सत्पात्रको ही देना चाहिए। सत्सगति और दयामय धर्म कदापि नहि छोडना चाहिए। लोकमे जीव, पुद्गल,

धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छह द्रव्य (पदार्थ) ही है। अपने मुखसे अपने तो गुण और परके अवगुण कदापि उद्घाटित (प्रकट) नहि करना चाहिए। जैनपाठशालाओंका उद्देश (अभिप्राय) बालकोंको सरलताके साथ नैतिक धार्मिक लौकिक शिक्षा देनेका होना चाहिए। सच्चे देव सच्चे गुरु और अहिंसामय सनातन धर्मका श्रद्धान करना (मानना) सो सम्यग्दर्शन है। श्रीकृष्ण और बलदेवमें अद्भुत भ्रातृस्नेह था। जिसका कभी अन्त न हो, उसको अनन्त कहते हैं। आज कलके अनेक लोभी गुरु भोले जीवोंको कुपथमें चलानेवाले होते हैं। चन्दनचर्चित प्रतिमाके कभी दर्शन नहि करना पक्षपात करना है। निःसहाय अन्ध कुब्जकी (पंगुलोंकी) सहायता करनेमें बडा पुण्य है। जो सर्वज्ञ, वीतरागी (आठारह-दोपरहित) और सबका

हो, वही सत्यार्थ आप्त (सच्चादेव) है । प्राकृत भाषामें आत्माका अप्पा, आदा और कल्पामरका कप्पामर हो जाता है । ईप्सितकार्य (मनोवांछितकार्य) उत्तम यत्नके विना सफल नहिं होता

चौपाई १६ मात्रा

मूरख सुत कण्टक सम जानहु ।
खोटी उत्कण्ठा सव मानहु ॥
पण्डित-जनका कर सत्कारा ।
जो उत्तमगुणके भण्डारा ॥ १ ॥
सत्पात्रनको कर सेद्दाना ।
सत्सगतिसे सद्गति पाना ॥
उद्घाटन परदोष न करहू ।
कर उद्धार दीनदुख हरहू ॥ २ ॥
सन्तनके अद्भुत सन्तोषा ।
ग्रन्थसहित गुरु होय सदोषा ॥

१ छोड़दो । २ उत्तम दान । ३ अच्छी गति । ४ प्रगट । ५ सहाय । ६ धन धान्य हाथी घोडे आदि परिग्रह सहित ।

अन्ध कुब्ज बधिरादि अपाहिज।
इनको पालहु बन्धु समझ निज ॥ ३ ॥

झूठ बोलनेका फल।

आगरेमें एक लडकी अपने मकानकी छत पर बैठी बैठी एक वर्षके अपने भाईको खिलाया (रमाया) करती थी वह दूसरे तीसरे दिन अचानकही झूठ मूठ चिल्ला उठती कि "अरी अम्मा दौडियो, भइयेको एक बन्दर लिये जाता है।" जब उसकी माता घबडाकर छत पर जाती तो वह लडकी हम देती। इसी प्रकार तीन चार बार झूठा शोर करके अपनी माताको बुलालिया था। दैवयोगसे एक दिन सचमुच ही एक बडासा बन्दर आकर उस लडकीको नोचने खसोटने लगा, तब वह लडकी फिर भी पहिलीकी तरह चिल्ला उठी कि—'अरी अम्मा जल्दी दौडियो! आज सचमुच ही एक बडासा बन्दर आ गया, और मुझे खसोटकर अब भइयेको लेजाता है।" उसकी माताने पहिलीकी तरह आज भी उसके चिल्लानेको झूठ समझा और अनेक प्रकारसे दीनताके साथ प्रार्थना करनेपर भी वह लडकीकी सहायता करनेको छत पर नहि गई। जिसका फल यह हुआ कि वह बन्दर उस लडकीको अधमरी करके उस बच्चेको उठाकर ले गया, और दुमञ्जले कानपरसे पाखानेकी गलीमे डाल गया; जिससे वह तुरत ही मर गया।

इस कहानीसे यह बात याद रखना चाहिये कि—जो लडकी लडके हमेशह झूठ बोलते हैं वे कभी एक आध बार सच भी बोलें तो उनको बातपर कोई विश्वास नहिं करता और उस झूठके फलसे वे इस लडकोकी तरह अवश्य ही दुःख भागते है।

इकीसवा पाठ मिश्रसयोग तीसरा भाग।

ब्×द्+अ = ब्द। श्+च×अ = श्च।

प्+द×अ = प्द।

ब् द ब्द अब्द शब्द अपशब्द विक्रमाब्द।
ब् ध ब्ध आरब्ध प्रारब्ध प्रालब्ध लुब्ध।
म् प म्प सम्पदा सम्पत्ति दपती कंपन।
म् फ म्फ लम्फन उल्लम्फन गुम्फित।
म् ब म्ब लम्बा विम्बित प्रतिबिंब अंबा।
म् भ म्भ अम्भ, कुम्भ रम्भा समारंभ।
ल् ग ल्ग फल्गु फाल्गुण फाल्गुणिक।
ल् ट ल्ट उल्टा सुल्टा पल्टा कुल्टा।
ल् प ल्प अल्प गल्प स्वल्प कल्प कल्पना।
ल् भ ल्भ प्रगल्भता।

श् च श्च निश्चय अनिश्चय दुश्चरित्र।
श् छ श्छ उरश्छद शिरश्छेद शिरश्छत्र।
ष् क ष्क निष्कपट निष्काम दुष्कर।
ष् ट ष्ट मिष्ट शिष्ट दुष्ट कष्ट इष्ट अनिष्ट।
ष् ठ ष्ठ ओष्ठ कोष्ठ निष्ठा ज्येष्ठ प्रकोष्ठ।
ष् प ष्प पुष्प पुष्पिता वाष्प वाष्पयान।
ष् फ ष्फ निष्फल दुष्फल निष्फलता।
स् क स्क नमस्कार पुरस्कार सस्कृत।
स् ख स्ख स्खलित स्खलन परिस्खलन।
स् त स्त दुस्तर निस्तार पुस्तक आस्तिक।
स् त स्थ स्वस्थ गृहस्थ स्थिर अवस्था।
स् प स्प स्पर्श परस्पर स्पृहा वनस्पति।
स् स स्स दुस्सह निस्सहाय निस्संशय।

शिक्षायें।

अपशब्द व्यवहार करना अभद्रताका सूचक है। आरब्ध (प्रारम्भ किये हुये) कार्यको अधबीचमें छोड देना कायरोंका काम है। सम्प्रदावालोंके प्रायः सब ही दास हो जाते हैं—

मातापिताओके भले बुरे आचरण सन्तानरूपी दर्पणमें प्रतिबिम्बित होते हैं । लोकनिन्दाके भयसे उत्तमकार्योंको प्रारम्भ नहि करते, वे बडे मूर्ख हैं । सवादपत्रोंके पढनेसे घर बैठे सब मुल्कोंकी खबरें मिलती हैं और अनेक प्रकारके लाभ होते हैं । फाल्गुन और चैत्र मासको वसत ऋतु कहते हैं । पढते समय अल्पसी भी गल्प (गप्पें) करना नहिं चाहिये । विपत्तिमें प्रगल्भता (हिम्मत) ही काम आती है । समस्त दुश्चरित्रोका (कुव्यसनोका) राजा जूवा व्यसन है । कपट करके छिपा लेना, बडा दुष्कर कार्य हैं इसकारण मनुष्यको निरन्तर निष्कपटता पूर्वक ही रहना चाहिये । जो हर समय परका अनिष्ट चितवन करते हैं, वे वडे दुष्ट होते है । ज्येष्ठ वैशाखकी गर्मधूपसे अपनेको बचाते रहो । विद्या पढनेका परिश्रम निष्फल नहिं जाता । सस्कृत भाषा समस्त भाषाओकी माता है । जो कोई जीव अजीव

पुण्य पाप स्वर्ग नर्क और बन्ध मोक्षको नहि मानते, उनको नास्तिक कहते हैं। स्वस्थ अवस्थामें ही बुद्धि स्थिर रहती है। घरमे परस्पर (आपसमें) मेल रखनेसे हो घरकी शोभा और सबको सुखकी प्राप्ति होनी है।

चौपाई १५ मात्रा।

जो अपशब्द[1] लुब्ध[2] उच्चरे[3]।
सो निज कीरति सम्पति[4] हरे ॥
पढ संवाद-पत्र[5] गम्भीर।
कल्पित[6] गल्प[7] जल्प[8] मत वीर ॥ १ ॥
देव धर्म गुरु निश्चय करो।
दुस्तर[9] दुखमय भवदधि[10] तरो ॥
निष्ठुर[11]-जन-मन-करुणा कहां।
धर्म-पुष्प[12] निष्फल है तहां ॥ २ ॥
हस्तमिलाय[13] नमस्कृत[14] करे।
सो इहकालिक[15] रीती धरे ॥

१ गालीवगैरह। २ लोभी। ३ कहता है। ४ यशरूपी धन। ५ अखबार। ६ झूठी। ७ कहानियां। ८ कहै। ९ कठिन। १० संसार समुद्र। ११ निर्दय। १२ धर्मरूपी फूल। १३ हाथ मिला कर। १४ नमस्कार। १५ आजकलकीसी।

आपदमें अस्थिरता तजो।
धीरज धर सुख निश्चय लहो॥ ३॥

दया ही परम धर्म है।

एक दिन दोपहरके समय दयाचंद नामका जनीका लडका ग्रामके वृक्ष तले खडा था। उसने देखा कि—एक विच्छू उस पेडपरसे तप्तायमान बालूमें गिरकर तलमलाने लगा है। उसको देखते ही दयाचन्दके चित्तमें दया आई कि यदि इसको छांहमें नहिं रक्खा जायगा तो मेरे देखते देखते इसका प्राणांत हो जायगा। जिस प्रकार बने, इसको बचाना चाहिये। ऐसा विचारकर और कोई उपाय न देख, उसने तडफते हुये उस विच्छूको अपने हाथमें उठाकर छांहमें धरना चाहा। परन्तु बिच्छूने अपने स्वभावसे दयाचन्दकी हथलीमें बडे जोरसे डंक मारा। जिसकी पीडासे ज्योंही वह व्याकुल हुआ घबडाया त्योंही उसके हाथसे वह विच्छू गर्म २ बालूमें गिरकर फिर तडफडाने लगा।

दयाचन्दके चित्तमें फिर भी स्वाभाविक दयाने जोर किया तो अपने दर्दको भूलकर उसने झट बायें हाथमें उसे उठा लिया। विच्छूने फिर भी जोरसे डंक मारा तो उसकी असह्य पीडाके कारण, हाथके हिल जानेसे वह विच्छू फिर तप्तायमान बालू रेतमें गिरकर तलमलाने लगा। उसे तलमलाते देख दया-

चन्दने अपने मनही मन कहा कि हाय मै बडा दयाहीन हूं, जो इस तुच्छ जानवरके भी प्राण नहिं बचा सका? धिक्कार हो मेरे जनीपनेको! इस प्रकार विचार करके अपने मनको कडा किया और शीघ्रतासे उस विच्छूको उठाकर ढाहमें रखना चाहा कि—विच्छूने फिर भी उसके हाथमें एक डंक मारा और हाथमेंसे छाहमें गिर पडा। उस समय वहीं पर एक दयाहीन पुरुष खडा २ यह कौतुक देखरहा था। उसने दयाचंदसे कहा कि—"अय लडके! तू बडा मूर्ख है, जो इस दुष्टको वारवार उठाता है और वारवार इससे कटवाता है। और इसका तो स्वभाव ही दुष्ट है, इस पर दया करनेसे क्या लाभ? देख! तूने दया करके इसको बचानेकेलिये तीन वार उठाया परंतु इसने तीनों ही वारमें तेरे हाथमें डंक मारा। सो भाई! इस दुष्टको तो जहां देखा मार डालना ही ठीक है।" यह वात सुनकर दयाचंदने कहा कि—मुझे तो तुम ही बडे मूर्ख दीखते हो। क्योंकि तुम इसको दुष्ट स्वभाव बताते हो परन्तु यह दुष्ट स्वभाव कदापि नहीं है; किंतु अज्ञानी है इसको इतना ज्ञान कदापि नहीं है कि यह मनुष्य तो मेरा हित करनेवाला है और यह मनुष्य अहित करनेवाला है। इसका तो स्वभाव ही ऐसा है कि—जो कोई इसको छेडता है वा तकलीफ देता है तो अपनी रक्षाके लिये अपनी पूंछको (डंकको) हिला देता है। यह द्वेषभावसे डंक नहिं मारता है, जो इसको दुष्ट स्वभाव कहा जाय? इसको तो यह भी मालूम नहीं कि मेरी पूंछमें

विष है और वह मनुष्यको कष्ट देता है, और यदि तुमारे कहनेसे थोडी देरकेलिये इसको दुष्ट स्वभाव मान भी लिया जाय, तब तुम इतना तो विचार करो कि—जब यह अपने दुष्टस्वभाव को (खराब भावको) नहिं छोडता है तो मैं अपने दयाभावको (अच्छे स्वभावको) क्यों छोड़ ? जो इसके प्राण बचानेमें समर्थ होता हुआ भी अपने सम्मुख तडफ २ कर मरन दूं। दयाचन्दका यह उत्तर सुनकर वह पुरुष निरुत्तर व लज्जित होकर चल दिया और दयाचन्द बड़े यत्नसे उस विच्छूको वृक्षकी खोहमें रखकर अपने घरको चला गया। घर जाकर अपने हाथका इलाज करा लिया।

बालको देखो ! दयाचन्दने अपना कैसा दयामय भाव प्रगट किया। यद्यपि प्राणीमात्रका स्वभाव दयामयी है। परन्तु तुम्हारा व तुमारे बडोंका तो धर्म ही दयामय जैनधर्म है कि—चाहे कैसा ही दुष्ट स्वभाव व अपना शत्रु भी क्यों न हो, सदैव दयाभाव रखकर उसका हित साधन करना उचित है। आज कल बहुतसे दयाहीन मनुष्य कहा करते हैं कि—"जिगांसन जिघांसीयात्" अर्थात् "हतेको हनिये पाप दोष नहिं गनिये" सो ऐसे दयाहीन पुरुषोंकी कहावत पर विश्वास न करके, सांप विच्छू, खटमल डास, मच्छर तथा सिंह व्याघ्रादि हिंस्र जतु भी तुम्हारे पर आक्रमण करें तो जहांतक होसके, उनको तकलीफ न देकर अपनी जान बचा लेनी चाहिये। क्रोधके वशीभूत हो उसको जानसे मारनेका सकल्प करना कदापि

उचित नहीं तथा अपने दुश्मनको कभी कोई आपत्ति आन पड़े तो जहां तक अपनी सामर्थ्य हो उसको सहायता करनेमें कदापि नहिं चूकना चाहिये। क्योंकि यही महापुरुषोंका स्वभाव अर्थात् जैनियोंका धर्म है।

बाईसवा पाठ तीन व्यञ्जनोंका संयोग।

क्+ष्+म×अ+ = क्ष्म। ङ क् ष् अ = क्ष।

क् ष् ण क्ष्ण—तीक्ष्ण तीक्ष्णता तीक्ष्णबुद्धि।

क् ष् म क्ष्म—लक्ष्मण लक्ष्मी लक्ष्मीपति।

ङ् क् ष क्ष—कांक्षा आकांक्षा निःकांक्षित।

च् छ व च्छ्व—उच्छ्वास उच्छ्वासित।

ज् ज् व ज्ज्व—उज्ज्वल समुज्ज्वल उज्ज्वलवर्ण।

त् त् र—त्त्र पुत्त्र (पुत्र) पौत्त्र (पौत्र) प्रपौत्त्र।

त् त् व त्त्व—तत्त्व अतत्त्व महत्त्व सत्त्व

त् म् य त्म्य—माहात्म्य तादात्म्य।

न् त् न्त्र—तन्त्र मन्त्र यन्त्र यन्त्रण।

न् त् व न्त्व—सान्त्वन (सात्वन) सान्त्वना।

न् द् व न्द्व—द्वन्द्व चरणद्वन्द्व द्वन्द्वसमास।

न् द् र [illegible] इन्द्राणी [illegible]

न् ध् य न्ध्य-सन्ध्या वंध्या विंध्याचल।
म् प् र म्प्र-सम्प्रदाय संप्रति साम्प्रत सांप्रत।
म् भ् र म्भ्र-सम्भ्रम संभ्रात संभ्रांति।
र् च् च र्च्च-अर्च्चा चर्च्चा अर्च्चित समर्च्चित।
र् ज् ज र्ज्ज-दुर्ज्जन उपार्ज्जन धनोपार्ज्जन।
र् द् द र्द्द-निर्द्दिष्ट निर्द्दय निर्द्देश निर्द्देशा।
र् द् र र्द्र-आर्द्रित आर्द्रचित्त आर्द्रहृदय।
र् म् म र्म्म-धर्म्म कर्म्म शर्म्म धर्म्मात्मा।
र् य् य र्य्य-आर्य्य कार्य्य वर्य्य सौन्दर्य्य।
र् व् व र्व्व-सर्व्व खर्व्व पर्व्व पार्व्वती।
ष् प् र ष्प्र-दुष्प्राप्य निष्प्रकम्प निष्प्रयोजन।
स् त् र स्त्र-स्त्री परस्त्री शस्त्र शास्त्र शास्त्री।

शिक्षायें।

विचारमें मग्न हुए विना बुद्धि तीक्ष्ण नहि होती। अपव्ययीके घरपर लक्ष्मी नहि ठहरती। आकांक्षा ही दुःखका असाधारण लक्षण है। अपने परिणाम निरन्तर उज्ज्वल रखने चाहि-

ये। पुत्रके पुत्रको पौत्र कहते हैं । आलस्य करनेसे महात्माओंका भी महत्त्व नष्ट होजाता है। सच्चे महात्माओंका माहात्म्य छिपा नहि रहता । आजकल यन्त्र मन्त्र तन्त्र करनेवाले प्रायः ठग होते है । शोकाकुल व्यक्तिको सान्त्वना करके स्वस्थ करना चाहिये। स्त्रियें विना कारण ही द्वन्द्व कर बैठती हैं । पतिव्रता स्त्रियोको इन्द्र भी नमस्कार करता है। व्रती श्रावकको प्रातःकाल और सन्ध्या समय अवश्यही सन्ध्यावंदन [सामायिक] करना चाहिये। सम्प्रति स्त्री-शिक्षाके प्रचारसे ही जात्युन्नति व धर्मोन्नति हो सकती है । भ्रम हो जानेको सम्भ्रान्ति कहते हैं। चतुर लड़के निरंतर पढ़ने लिखनेकी ही चर्चा किया करते है। सांसारिक कार्य्योंमें ही मूर्च्छित हो जाना उचित नहीं अर्थात् दो चार घटे पारमार्थिक कार्य्य (धर्म-कार्य्य) भी करने चाहिये। अन्यायसे उपार्जन

किया हुआ धन शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। निर्दिष्ट समय पर भोजन शयनादि करनेसे रोग नहि होता। मनके सुखवर्द्धनका उपाय निरंतर सोचते रहना चाहिये। तनमनधनसे परोपकार करना ही परम धर्म है। तनमनवचनसे परधन हरणके त्यागको अचौर्य्यव्रत कहते हैं। बालकपनमें समस्तकार्य्य छोड़ विद्योपार्जन करना ही सर्वापेक्षा मुख्य कर्त्तव्य है। दुष्प्राप्य विषयकी आशा करना निष्प्रयोजन है। जो स्त्रियें धर्मशास्त्र नहि पढ़तीं, वे कदापि सदाचारिणी, पतिव्रता और सुखी नहिं हो सकतीं।

तेईसवां पाठ गुरु शिष्य प्रश्नोत्तर (सम्यग्दर्शन)*

शिष्य—गुरुजी! आज हम धर्मविषयक कुछ प्रश्न किया चाहते हैं, यदि चरणोंकी आज्ञा हो तो अर्ज करें।

गुरु—हां बेटे! पूछो, मैं इस बातसे बहुत ही प्रसन्न होता हूं कि जो तुम लोग प्रत्येक विषयमें प्रश्न किया करते हो।

---

* ये सब प्रश्न कई विद्यार्थियोंकी तरफसे एक विद्यार्थी करता है। और बाकीके विद्यार्थी बड़े ध्यानसे सुन रहे हैं तथा नोट कर रहे हैं।

शिष्य—गुरुजी दुनियाके लोग 'धर्म' 'धर्म' कहते हैं, सो धर्म क्या चीज है और उसके जाननेसे क्या लाभ है ?

गुरु—भाई, धर्म नाम आत्माके (जीवके) असली स्वभावका है। अपने स्वभावको जाननेसे सुखकी प्राप्ति होती है। अर्थात् जो (आत्माका स्वभाव) संसारसे छुड़ा कर सुखमें धरदे सो धर्म है।

शिष्य—आत्माके (जीवके) धर्म (स्वभाव) कितने हैं ?

गुरु—आत्माके धर्म बहुत हैं, परन्तु वे सब [illegible] सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र इन तीनके ही भेद हैं।

शिष्य—अच्छा, पहले यह बताइये कि सम्यग्दर्शन किसको कहते हैं।

गुरु—भाई, यह विषय बहुत कठिन है। इन [illegible] सम्यग्ज्ञान सम्यक् चारित्रका स्वरूप और [illegible] बच्चोंको समझा देना सहज नहीं है। क्योंकि [illegible] श्रावकाचार द्रव्यानुयोग अध्यात्मग्रन्थ [illegible] तरहसे कहा है। तथापि यदि तुम प्रतिदिन [illegible] कर सुनोगे तो श्रावकाचारके अनुसार [illegible] थोड़ा बहुत तुम्हारी समझमें भी आजावेगा।

शिष्य—गुरुजी जैसा आप कहेंगे [illegible] नेको तयार हैं परतु जिसप्रकार हमारी [illegible] आजावे, [illegible] सरलताके साथ बता दिया करें।

गुरु—बहुत ठीक तुम, ध्यान देकर [illegible] और [illegible] तो बहुत जल्दी

शिष्य—तो कहिये सम्यग्दर्शन किसको कहते हैं?

गुरु—सच्चे देव सच्चे शास्त्र और सच्चे गुरुका श्रद्धान करना (मानना) सो सम्यग्दर्शन है।

शिष्य—सच्चे देवकी पहचान क्या है?

गुरु—जो देव वीतराग सर्वज्ञ और हितोपदेशी (सब जीवोंका हितकर्ता) हो।

शिष्य—वीतराग किसको कहते हैं।

गुरु—जिसके अठारह प्रकारके दोषोंमेंसे एक भी दोष नहीं हो, उसको वीतराग व वीतरागी कहते हैं।

शिष्य—अठारह दोष कौन २ से हैं।

गुरु—क्षुधा १ तृषा २ निद्रा ३ जन्म ४ मरण ५ बुढ़ापा ६ रोग ७ भय ८ गर्व ९ राग १० द्वेष ११ मोह १२ चिंता १३ रति १४ अरति १५ खेद १६ स्वेद १७ आश्चर्य १८ ये अठारह दोष अथवा दुःख हैं।

शिष्य—अच्छा अब यह बताइये कि सर्वज्ञ किसको कहते हैं।

गुरु—जो सब विषयोंको जानता हो, अर्थात् संसारमें ऐसी कोई भी बात न है न हुई और न होगी जिसको सर्वज्ञ नहिं जानता हो।

शिष्य—हितोपदेशी किसको कहते हैं?

गुरु—जिसका उपदेश किसीको भी अहितकारी न हो अर्थात् प्राणीमात्रको (प्रत्येक जीवको) हितकारी हो।

शिष्य—सच्चा शास्त्र किसको कहते हैं।

गुरु—जो सच्चे देवका कहा हुआ तथा उसके वचनोंके अनुसार बना हुआ हो, तत्वोंका (वस्तुका सच्चा स्वरूप) उपदेश करनेवाला हो और जिसके बाचने सुननेसे सब जीवोंका हित हो, वही सच्चा शास्त्र है।

शिष्य—उक्त तीन गुणोंके धारक हमारे सच्चे देव कौन कौनसे और कितने है।

गुरु—हमारे यहां सच्चे देव अनन्तानन्त हो गये और आगे होंगे परंतु वर्तमानमें हम जिनकी मूर्ति (प्रतिमा) बनाकर पूजते हैं, वे कुल चौबीस है।

शिष्य—उन चौबीसोंके नाम बतलाइये जो हम अपनी कापीमें लिखकर याद करलें

गुरु—अच्छा लिख लो और इनको जरूर २ याद भी कर लेना चाहिये।

१ ऋषभ। (आदिनाथ)	१३ विमल।
२ अजित।	१४ अनंत।
३ संभव।	१५ धर्म।
४ अभिनंदन।	१६ शांति।
५ पद्मप्रभ।	१७ कुन्थु।
६ सुपार्श्व।	१८ अर।
७ सुमति।	१९ मल्लि।
८ चंद्रप्रभ।	२० मुनिसुव्रत।

९ पुष्पदन्त। (सुविधि) २१ नमि।
१० शीतल। २२ नेमि (अरिष्टनेमि)
११ श्रेयांस २३ पार्श्वनाथ।
१२ वासुपूज्य। २४ महावीर (वर्द्धमान)

इनमेंसे ऋषभको आदिनाथ पुष्पदंतको सुविधिनाथ नेमिको नेमनाथ वा अरिष्टनेमि और महावीरको वर्द्धमान तथा सन्मति भी कहते हैं।

शिष्य—सच्चे गुरुकी पहचान क्या है?

गुरु—जो चोवीस परिग्रहरहित और ज्ञान ध्यान तपमें लवलीन हो, वही सच्चा गुरु है।

शिष्य—तो गुरुजी आप और भट्टारकजी क्षुल्लकजी वगैरह वस गुरु हैं?

गुरु—भाई! असल गुरु नाम बडे का है। सो गुरु कई प्रकारके हैं। जैसे विद्यागुरु, सम्बन्धगुरु, अधिकारगुरु, वयसगुरु, बुद्धिगुरु, धर्मगुरु आदि अनेक प्रकारके गुरु हैं। इनमेंसे जो विद्या पढावे, उसको विद्यागुरु कहते हैं। सो मैं तो तुमारा विद्यागुरु हूं। मातापितादि सम्बन्धमें बडे हैं, इस कारण उनको सम्बन्धगुरु कहते हैं। राजा, कलक्टर, मजिस्ट्रेट, सभापति आदि अधिकारगुरु हैं। जो उमरमें बडे हों, वे वयसगुरु हैं जो अपनेसे बुद्धिमें बडे हों, वे बुद्धि गुरु हैं और नग्नदिगंबर मुनि होकर धर्मोपदेशके द्वारा प्राणीमात्रको धर्ममार्गमें चलावें, वे धर्मगुरु हैं। शिथिलाचारी भट्टारकजी व क्षुल्लकजी वगैरह विद्या, बुद्धि

उपरमें बड़े (गुरु) हो सकते हैं, परन्तु सच्चे धर्मगुरु नहिं हो सकते।

शिष्य—अच्छा अब यह बताइये कि सम्यग्ज्ञान किसको कहते हैं।

गुरु—बस, आज इतना ही रहने दो। यह सम्यग्दर्शनका विषय अच्छी तरहसे याद करलो फिर कलदिन सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्रका स्वरूप बताया जायगा।

शिष्य—(विनयके साथ) जो आज्ञा।

चौवीसवा पाठ गुरुशिष्यप्रश्नोत्तर (सम्यग्दर्शन)

शिष्य—गुरुजी कलके प्रश्नको हमने भले प्रकार याद कर लिया है। आप परीक्षा ले लेवें और सम्यग्ज्ञान तथा सम्यक्-चरित्रका स्वरूप और बतादें।

गुरु—परीक्षा लेनेसे प्रश्नोत्तरोंके लिये फिर समय नहिं रहैगा सो आज तुमको जो कुछ पूछना हो सो पूछ लो। परसोंके दिन एक साथ सब परीक्षा ले ली जायगी।

शिष्य—अच्छा तो पहिले यह बताइये कि सम्यग्ज्ञान किसको कहते हैं?

गुरु—सात तत्त्वोंके स्वरूपको भले प्रकार जानना सो सम्यग्ज्ञान है।

शिष्य—भलेप्रकारका अर्थ क्या है सो समझमें नहिं आया।

गुरु—तत्त्वोंके स्वरूपको काम जियादा अथवा विपरीत

(उल्टा) न जानकर जैसाका तैसा जानना सो भलेप्रकारका (सम्यक्) जानना है।

शिष्य—सात तत्त्व कौन २ से है ?

गुरु—जीव अजीव आस्रव बंध संवर निर्जरा और मोक्ष ये सात तत्त्व हैं।

शिष्य—हमने इस पुस्तकमें पढ़ा है कि जगतमें द्रव्य छह ही है, सो वे छह द्रव्य फिर कौनसे रहे ?

गुरु—वे छह द्रव्य, जीव अजीव इन दो मूल तत्त्वोंमेंसे अजीवतत्त्वके पांच भेद करनेमें हो जाते हैं। जैसे जीव १ पुद्गल २ धर्म ३ अधर्म ४ आकाश ५ और काल ६ ये षट्द्रव्य हैं। इनमेंसे पुद्गलादिक पांच द्रव्य अजीव (जड़) हैं और जीव चैतन्य स्वरूप अर्थात् ज्ञानमयी पदार्थ है।

शिष्य—पुद्गल किसको कहते हैं ?

गुरु—जिस पदार्थमें स्पर्श रस (स्वाद) गंध और किसी न किसी प्रकारका रंग हो, वही पुद्गल है। जैसे—पत्थर काष्ठ जल धूप छाया रोशनी वगैरह सब पुद्गलोंके ही भेद हैं।

शिष्य—धर्मद्रव्य किसको कहते हैं ?

गुरु—जो द्रव्य मच्छीको जलकी समान जीव और पुद्गलोंको चलनेमें सहायक हो, वह धर्मद्रव्य है। धर्मद्रव्य समस्त लोकाकाशमें फैला हुआ अरूपी एक ही पदार्थ है।

१ जिन पदार्थमें किसी प्रकारका रूप रस गंध स्पर्श नहीं हो उसको अरूपी द्रव्य कहते हैं

शिष्य—अधर्मद्रव्य किसको कहते हैं ?

गुरु—मुसाफिरको वृक्षके समान, जीव पुद्गलोंको ठहरनेमें सहायक हो; उसको अधर्मद्रव्य कहते हैं। अधर्मद्रव्य भी एक है और समस्त लोकाकाशमें फैला हुआ अरूपी पदार्थ है।

शिष्य—आकाशद्रव्य किसको कहते हैं ?

गुरु—आकाश नाम खाली (पोल) जगहका है। सो जहांतक उपरि कहे हुये पांचद्रव्य पाये जाते हैं, उतनेको तो लोकाकाश कहते हैं और लोकके बाहर जो है, उसको अलोकाकाश कहते हैं।

शिष्य—कालद्रव्य किसको कहते हैं ?

गुरु—जो द्रव्य समस्त द्रव्योंकी अवस्था (पर्याय) पलटानेको कारण है, उसको कालद्रव्य कहते हैं। कालद्रव्य मोतियोंके ढेरकी समान लोकाकाशमें भरा हुवा असंख्यात द्रव्य है तथा इसीका एक भेद (पर्याय) व्यवहारकाल है। जिसके समय, पल, घटिका मुहूर्त आदि अनेक भेद (पर्याय) हैं।

शिष्य—अच्छा, जीव अजीवका स्वरूप तो समझा, अब यह बताइये कि आस्रव किसको कहते हैं ?

गुरु—कर्मोंके (पुण्य पापोंके) आनेके द्वारको (कारणोंको) आस्रव कहते हैं।

शिष्य—कर्म किसको कहते हैं ?

गुरु—जीवोंको सुखदुःखादिके कारण हों, उनको कर्म कहते हैं। ये कर्म ज्ञानावरणीय १ दर्शनावरणीय २ मोहनीय ३

गुरु—पांच पापोंका सर्वथा (मन वचन काय और कृत कारित अनुमोदनासे) त्याग करना सो मुनिका चारित्र है। इसको सकल चारित्र भी कहते है।

शिष्य—श्रावकका चारित्र (श्रावकाचार) किसको कहते हैं?

गुरु—पांच पापोंका एकदेश (स्थूलपनेसे यथाशक्ति) त्याग करना श्रावकका चारित्र है। इसको विकलचारित्र भी कहते हैं।

शिष्य—हिंसा किसको कहते हैं?

गुरु—प्रमाद[1]के वशीभूत होकर अपने व परके प्राणोंको घात करना व दुखाना (पीड़ा देना) सो हिंसा है।

शिष्य—अनृत किसको कहते हैं?

गुरु—जिस वचनके बोलनेसे किसीकी हानि हो या कष्ट हो उसको अनृत (मिथ्याभाषण) कहते हैं।

शिष्य—चोरी किसको कहते हैं?

गुरु—विना दिये किसीकी गिरी, पडी, रक्खी भूली हुई वस्तुको ग्रहण करना या उठाना तथा उठाकर किसी दूसरेको दे देना सो चोरी है।

शिष्य—कुशील किसको कहते हैं?

गुरु—स्त्री या पुरुषके साथ रमण करना सो कुशील है।

शिष्य—परिग्रह किसको कहते हैं?

---

१ पांच इंद्रिय, चार विकथा, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग द्वेष और निद्रा ये १५ प्रमाद हैं।

गुरु-धनधान्यादि दश और मिथ्यात्वादि चौदह परिग्रहोंमें मूर्च्छित (मोहित वा बेहोश) हो जाना सो परिग्रह है।

शिष्य-धन धान्यादि १० परिग्रह कौन कौनसे हैं?

गुरु- दोहा

भूमि यान धन धान्य गृह भाजन कुप्य अपार।

शयनासन चौपद दुपद, परिग्रह दश परकार ॥ १ ॥

इन दशको बाह्य परिग्रह कहते हैं।

शिष्य-मिथ्यात्वादि १४ परिग्रह कौन २ से हैं?

गुरु-मिथ्यात्व १ वेद २ राग ३ द्वेष ४ हास्य ५ रति ६ अरति ७ शोक ८ भय ९ जुगुप्सा १० क्रोध ११ मान १२ माया १३ लोभ १४ ये चौदह अंतरंग परिग्रह हैं।

शिष्य-गुरुजी! हम तो पहले श्रावक बनना चाहते हैं। अतएव हमको यह बताइये कि—पांच पापका एकदेश त्याग क्या होता है, जो हम धारण करें?

गुरु-यदि तुम श्रावक (जैनी) बनना चाहते हो तो सबसे पहिले पांच पापोंका एकदेश और मद्य मांस मधुका सर्वथा त्याग करके श्रावकके ८ मूलगुण धारण करो अर्थात्—

(१) त्रस (चलते फिरते द्वींद्रियादिक) जीवोंको संकल्पपूर्वक मारनेका त्याग करना सो श्रावकका पहिला मूलगुण है।

(२) जिससे किसी प्राणीको कष्ट हो ऐसे स्थूल असत्य भाषणका त्याग करना सो दूसरा मूलगुण है।

(३) जिससे किसीके प्राणोंको कष्ट हो ऐसी स्थूल चोरीका [illegible] सो तीसरा मूलगुण है

(४) परस्त्रीसे या परपुरुषसे रमनेका त्याग करना सो चौथा मूलगुण है।

(५) धन धान्यादि दशपरिग्रहका परिमाण करके बाकीका त्याग कर देना सो पांचवा मूलगुण है।

(६) मद्य (दारु-शराब) भंग वगैरह नशेवाली चीजोंके सेवनका त्याग करना सो छठा मूलगुण है।

(७) द्वींद्रियादिक त्रस जीवोंके शरीरका कलेवर अर्थात् मांस खानेका त्याग करना सो सातवां मूलगुण है।

(८) मधुमक्खियोंको उगाले व उनके बच्चोंके निचोड़े हुए अर्कसहित महा अपवित्र मधुके (शहदके) खानेका त्याग करना सो आठवां मूलगुण है।

शिष्य—क्या इन आठ मूलगुणोंके धारण करनेसे हम वास्तविक (सच्चे) श्रावक हो सकते हैं?

गुरु—वास्तविक श्रावक तो इन आठ मूल गुणोंका पांच २ अतीचार (दोष) रहित पालन तथा इसी प्रकार दोषरहित सात शीलव्रतोंके धारण करनेसे हो सकते हो परंतु सबसे पहिले उपर्युक्त आठमूलगुणोंको धारण करलो तो भी आजकलके नाममात्र श्रावकोंसे हजार दर्जे श्रेष्ठ हो सकते हो।

शिष्य—तो गुरुजी! वे पांच २ अतिचार और शीलव्रत भी क्यों नहिं बता देते, जो हम वास्तविक श्रावक बननेका प्रयत्न करें?

गुरु—उनका स्वरूप समझना तथा धारण करना जरा कठिन है। जब श्रावकके मूलगुणोंको धारण करनेमें आवो, तब उनका स्वरूप समझना।

शिष्य—जो आज्ञा, परंतु इनके पहले ७ शीलव्रतोंके नाम तो बता दीजिये ?

गुरु—अच्छा सीख लो और याद भी करलो, कभी न कभी काम आयेंगे।

(१) दिग्व्रत
(२) अनर्थदंडव्रत
( ) भोगोपभोगपरिमाण
— इन तीनोंको गुणव्रत कहते हैं।

(४) देशावकाशिक
(५) सामायिक
(६) प्रोषधोपवास
(७) अतिथिसंविभाग
— इन चार व्रतोंको शिक्षाव्रत कहते हैं।

शिष्य—[हाथ जोड़कर] बहुत ठीक है।

—०—

लावनी चालखड़ी।

विद्याधन उत्तम इस जगम, सुनो सकल सज्जन प्यारे।
खर्च गए फिर हाथ न आवे, लुटा हो लूटनहारे ॥ टेक ॥
मूल्य नहीं कोई कर सकता, विद्याधनका जगमांहीं।
नहीं कोई चोरी कर सकता, भूपति लेसकता नाहीं ॥
दायेदार बटा नहिं सके कभी न क्षय होता भाई।
जहां जाय तहां संग चलत है, मित्रगणोंसे अधिकाई ॥
दान दियेसे दिन दिन बढ़ती इत्यादिक गुण अधिकारे।
खर्च गये फिर हाथ न आय, लूटा हो लूटनहार ॥ विद्या० ॥ १ ॥
चमत्कार जो गये नये इस, जगमें देखन हो भाई।
सो सब विद्याका बल जानो, और नहिं कोई चतुराई ॥